इकाई – 5
पर्यावरण एवं समाज
(Environment and and Society)

परिचय (Introduction)

समाज के विकास की प्रारंभिक अवस्था में पर्यावरण एक निर्धारित कारक के रूप में प्रभावी था। समाज के रीति–रिवाजों, परम्पराओं, संस्कृति एवं सामाजिक मूल्यों में पर्यावरणीय परिस्थितियों की महत्वपूर्ण भूमिका परिलक्षित होती है। प्रारंभिक काल में मानव की पारस्परिक निर्भरता अधिक थी जिसके कारण संयुक्त परिवार की व्यवस्था प्रभावी थी। स्वास्थ्य के प्रति कम जागरूकता एवं स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव होने से मृत्यु दर अधिक थी। इसी कारण पुराने समय में अधिक सन्तानों की उत्पत्ति लाभदायक मानी जाती है। इसी प्रकार भवन निर्माण सामग्री, उसका नक्शा, उसमें खिड़कियों, दरवाजों की दिशा, प्रवेश द्वार की दिशा, आदि पर्यावरणीय परिस्थितियों द्वारा नियंत्रित होता था। इसका तात्पर्य यह है कि पूर्व में सभी सामाजिक पहलुओं में पर्यावरणीय परिस्थितियों का समावेश था। परन्तु विकास के साथ–साथ मानवीय क्षमताओं, क्रियाशीलता, तकनीकी ज्ञान एवं साधन सुविधाओं में वृद्धि होती गई। इसके फलस्वरूप सामाजिक संगठन, स्वरूप एवं सामाजिक मूल्यों व मानदण्डों में भी परिवर्तन आने लगे।

सामाजिक परिवर्तन समाज का एक स्वभाव है। यह सामाजिक परिवर्तन नगरीकरण, औद्योगीकरण, पश्चिमी संस्कृतिकरण आदि प्रक्रियाओं से तेजी से बढ़ा है। एक ओर जहाँ भारत में रीति–रिवाज एवं परम्पराओं के अनुसार प्राचीन मूल्यों व निष्ठाओं को बनाये रखने की चुनौती का सामना करना पड़ रहा है वहीं दूसरी ओर विश्व के अन्य प्रगतिशील देशों के समान भारत में आधुनिकता की लहर आ रही है।

मानव समाज विश्व के सभी क्षेत्रों में गतिशील है तथा परम्पराओं में परिवर्तन होता रहता है। परम्पराओं से आधुनिकता की ओर परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन का रूप है। इसकी गति कहीं मंद तो कहीं तेज है। औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप विकास तेजी से हो रहा है तथा समकालीन सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के कारण आधुनिकता की ओर यह विकास अनिवार्य हो गया। परम्परा किसी भी जीवन क्षेत्र में कार्य करने का एक अनुभव सिद्ध प्रतिमान देती है।

मानव समाज एवं पर्यावरण का संबंध अत्यन्त प्राचीन है तथा वेदों में भी पर्यावरण के तीन प्रमुख घटकों वायु, मृदा एवं तापमान का विवेचन किया गया है। लेकिन मानव ने प्रौद्योगिकी एवं अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पर्यावरण का नुकसान किया है। जिसके प्रमुख कारण निम्न है –

पर्यावरण ह्रास के कारण

कृषि एवं औद्योगिक विकास के फलस्वरूप मानव ने प्रगति तो की है लेकिन इसके कारण पर्यावरण निम्न प्रकार से प्रभावित हुआ है –

1. वनोन्मूलन (Deforestation) – वन एक महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है जिसमें शाक से लेकर वृक्ष तक सभी पौधे साथ–साथ वृद्धि करते हैं तथा हमारे देश की जैविक सम्पदा में योगदान करते हैं।

लेकिन बढ़ते औद्योगीकरण एवं जनसंख्या वृद्धि के कारण वनों का उन्मूलन हो रहा है। जिससे अनेक महत्वपूर्ण प्रजातियाँ लुप्त होने के कगार पर पहुंच रही हैं।

2. नगरीकरण (Urbanization) – नगरों के विस्तार के कारण उसके आस–पास की भूमि का उपयोग उद्योगों एवं आवासों के लिए होता है। जिस भूमि का उपयोग कृषि के लिए होना होता है वह अतिक्रमण कर ली जाती है। नगरीकरण के फलस्वरूप कच्ची बस्तियों का विस्तार भी निरन्तर बढ़ता जा रहा है। रोजगार की खोज में गांवों व कस्बों से लोग महानगरों की ओर पलायन करते हैं जो खाली स्थानों, उद्योगों के आस–पास व नालों के आस–पास

कच्ची बस्तियाँ बना लेते हैं।

3. औद्योगीकरण (Industrialization) – भारत में औद्योगिकरण की गति में अत्यन्त तेजी आई है। इस हेतु भूमि, कच्चा माल, जल एवं अनेक संसाधनों की आवश्यकता होती है। इसके द्वारा निकलने वाले अनेक सह उत्पाद पर्यावरण के लिए एक खतरा उत्पन्न करते हैं। विभिन्न प्रकार के उद्योग जैसे उर्वरक, पेट्रो केमिकल्स, रिफाइनरी, कागज, चमड़ा, सीमेन्ट, धातु आदि अनेक महत्वपूर्ण उत्पादों का निर्माण तो करते हैं, लेकिन इनसे निकलने वाले अपशिष्ट व गैसें पर्यावरण प्रदूषण उत्पन्न करते हैं।

4. राष्ट्रीय राजमार्ग (National Highways) – भारत में सड़क परिवहन मार्गों को सुव्यवस्थित एवं अच्छा करने के लिए सरकार ने राष्ट्रीय राजमार्ग निर्माण की परियोजनाएं शुरू की। इन परियोजनाओं से सड़क परिवहन व्यवस्था तो सुचारू हो गई लेकिन इसके निर्माण में अनेक वृक्षों की कटाई, कृषि योग्य भूमि का नुकसान आदि से पर्यावरण का बड़ी मात्रा में ह्रास हुआ।

5. खनन (Mining) – भारत में वन क्षेत्र अनेक खनिज संसाधनों के भण्डार हैं। खनिज प्राप्त करने के लिए वनों की कटाई, वहाँ पर सड़क व रेलमार्ग का निर्माण किया जाता है जिससे वनों का ह्रास होता है। वहाँ की उपजाऊ मिट्टी बहकर चली जाती है तथा अनेक महत्वपूर्ण पादप जातियाँ नष्ट हो जाती है।

6. बहुद्देशीय परियोजनाएं (Multipurpose projects) – इन परियोजनाओं के तहत् बड़े–बड़े बांधों का निर्माण किया जाता है जिसमें जल एकत्रित कर सिंचाई एवं विद्युत उत्पादन किया जाता है। लेकिन इन परियोजनाओं से वनों के बड़े क्षेत्र का विनाश होता है। बांध के पानी के बड़े भूभाग में फैलने से वहाँ का समस्त वन जलमग्न हो जाता है। वहाँ पर पारिस्थितिकीय असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है। वनों के ह्रास से आर्थिक, सामाजिक एवं पर्यावरणीय हानि उठानी पड़ती है। इसके ज्वलंत उदाहरण नर्मदा सागर, टिहरी एवं सरदार सरोवर बांध है जिनके कारण आन्दोलन होते रहे हैं।

7. संसाधन ह्रास (Resource depletion) – मानव की वे आवश्यकताएं जिनकी पूर्ति पर्यावरण द्वारा होती है, संसाधन कहलाते हैं। ये संसाधन प्रकृति द्वारा देय होते हैं। ऐसे संसाधन जिनकी मात्रा पर्यावरण में निश्चित होती है, वे उपभोग करने के साथ संसाधन ह्रास कहते हैं। इनका उपयोग उपलब्धता रहने तक ही किया जा सकता है।

नव्यकरण संसाधन उपभोग के पश्चात् भी समाप्त नहीं होते हैं। ये एक निश्चित समयावधि के पश्चात् पुनः उपलब्ध हो जाते हैं। जैसे जल, वायु, सौर ऊर्जा, वन, चारागाह आदि।

अनव्यकरण संसाधन वे होते हैं जो उपभोग के साथ–साथ समाप्त होते जाते हैं तथा जिनका नवीनीकरण नहीं हो सकता हो। उदा. कोयला, खनिज, खनिज तेल आदि।

यदि किसी भी संसाधन को उपभोग अधिक मात्रा में करेंगे तो उसका ह्रास होगा अतः इसका संरक्षण करना आवश्यक है।

8. पर्यावरण प्रदूषण (Environmental pollution) – विज्ञान एवं तकनीकी के विकास के साथ–साथ मनुष्य ने पर्यावरण के घटकों को अपनी आवश्यकता के अनुरूप उपभोग करना प्रारंभ कर दिया। उत्पादन की दर बढ़ाने के लिए नये–नये आविष्कारों को जन्म दिया। इसका परिणाम सह उत्पादों के निर्माण के साथ–साथ कचरे के उत्पादन को भी बल मिला। प्राकृतिक संसाधनों का भारी मात्रा में शोषण शुरू हुआ तथा इससे पर्यावरण का अवनयन का संकट उत्पन्न हो गया। पर्यावरण प्रदूषित होने लगा तथा फलस्वरूप जल, वायु, ध्वनि, मृदा रेडियोधर्मी प्रदूषण का जन्म हुआ। प्रदूषण के फलस्वरूप पर्यावरण के विभिन्न घटकों के स्वरूप में बदलाव आने लगा। ओजोन परत क्षरण जलवायु परिवर्तन, अतिवृष्टि, अनावृष्टि जैसे अनेक परिणाम सामने आ रहे हैं।

मनुष्य की लालची प्रवृत्ति के कारण पर्यावरण का बिगड़ा हुआ स्वरूप सभी के सामने आ रहा है।

पर्यावरण शिक्षा एवं चेतना (Environmental Education and Awareness)

मनुष्य पर्यावरण का जैविक घटक है। पर्यावरण में होने वाले प्रत्येक परिवर्तन का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव उसके जीवन पर पड़ता है। अतः पर्यावरण की जानकारी प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है।

पर्यावरण की समस्याएं सार्वभौमिक है तथा विश्व के प्रत्येक व्यक्ति को पर्यावरण की जानकारी एवं पर्यावरण संरक्षण में सक्रिय भागीदारी का निर्वहन करना होगा। पर्यावरण संरक्षण में सभी व्यक्तियों की भागीदारी बढ़ाने के लिए जनचेतना अतिआवश्यक है। जनचेतना निम्न प्रकार से बढ़ाई जा सकती है –

1. पर्यावरणीय शिक्षा द्वारा – जनचेतना बढ़ाने का यह एक सशक्त माध्यम है। इसका उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति को पर्यावरण एवं इसके घटकों, उसके उपभोग, इससे संबंधित समस्याओं तथा उसके निराकरण के प्रति जनचेतना पैदा करना है।

पर्यावरणीय शिक्षा व्याख्यानों, रैलियों, प्रदर्शन, गोष्ठियों या प्रशिक्षण द्वारा जन–जन तक पहुंचाई जा सकती है।

2. संचार माध्यमों द्वारा – पर्यावरणीय जनचेतना को अनेक संचार माध्यमों जैसे समाचार पत्र, पत्रिकाएं, रेडियो, टेलीविजन आदि इलेक्ट्रॉनिक मीडिया द्वारा भी जनता तक पहुंचाई जा सकती है।

3. पर्यावरण विज्ञान केन्द्रों की स्थापना – प्रत्येक गांव में

पर्यावरण विज्ञान केन्द्रों की स्थापना कर पर्यावरण संबंधी समस्याओं, इसके कारणों एवं निवारणों की जानकारी ग्रामीणों को दी जा सकती है।

4. संगोष्ठी आयोजन द्वारा – पर्यावरण के संरक्षण एवं उसके महत्व को पहुंचाने के लिए ग्रामीणों, विद्यालय, महाविद्यालय के विद्यार्थियों एवं शिक्षाविद्‌ों के साथ संगोष्ठियों के आयोजन से भी किया जा सकता है।

5. मनोरंजन के साधनों द्वारा – पर्यावरण के महत्व के बारे में लोगों को मनोरंजन के साधनों जैसे नुक्कड़ नाटक, लोक संगीत एवं पारम्परिक गीतों के माध्यम से भी जन–जन तक पहुंचाया जा सकता है।

6. सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा – सरकारी विभाग जैसे पर्यावरण, विज्ञान व तकनीकी, प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड एवं अनेक गैर सरकारी संस्थाएं भी इस क्षेत्र में कार्यरत हैं। इनके द्वारा समय–समय पर पर्यावरण की सुरक्षा एवं संरक्षण हेतु अभियान चलाये जाकर जनचेतना जागृत की जाती है। विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में कार्यरत एन.एस.एस., एन.सी.सी. एवं स्काउट गाइड विद्यार्थियों द्वारा पर्यावरण के महत्व के संबंध में जनचेतना जागृत की जा सकती है।

7. विभिन्न प्रतियोगिताओं के आयोजन द्वारा – सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों में पर्यावरण से संबंधित विषयों पर जनचेतना जागृत करने के लिए विद्यार्थियों के मध्य पोस्टर निर्माण, निबन्ध लेखन, नारा लेखन जैसी प्रतियोगिताओं का आयोजन कराया जा सकता है। इसमें पर्यावरणीय समस्याएं, पर्यावरण संरक्षण के तरीके, गैर पारम्परिक ऊर्जा स्रोतों, सौर व पवन ऊर्जा का उपयोग आदि अनेक विषयों पर जानकारी दी जा सकती है तथा प्रतियोगिताओं के माध्यम से उन्हें पुरस्कृत कर अन्य लोगों को भी प्रेरणा प्रदान की जा सकती है।

8. पर्यावरण क्लब का गठन – पर्यावरण क्लब का गठन विद्यालय एवं महाविद्यालय स्तर पर किया जा सकता है। जिसका उद्देश्य इनमें अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों को विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण के प्रति संवेदनशील बनाना है। इस हेतु वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा आर्थिक सहायता भी दी जा सकती है।

इस क्लब के तहत्‌ विद्यार्थियों को पर्यावरण महत्व के स्थलों का भ्रमण कराना, पर्यावरण संबंधी फिल्में दिखाना, नाटक, पौधे लगाना, पोस्टर, पेन्टिंग, कार्टून, प्रश्न मंच एवं नारे लेखन आदि गतिविधियों का आयोजन करवाया जा सकता है।

9. जनसंख्या शिक्षा कार्यक्रम – बढ़ती हुई जनसंख्या भी पर्यावरण प्रदूषण एवं संसाधन अवनयन का एक कारण है। अतः बढ़ती हुई जनसंख्या को रोकने के लिए लोगों के मध्य जनसंख्या शिक्षा देना अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए लोगों को बढ़ती जनसंख्या, उसके कारण एवं परिणामों की जानकारी देना, स्त्री शिक्षा को बढ़ावा देना, पर्यावरण पर पड़ते इसके प्रभावों के प्रति सचेत करना, प्रदूषण आदि के प्रभावों से अवगत कराना मुख्य उद्देश्य है।

इस हेतु प्रभात फेरी, कठपुतली खेल, हॉर्डिंग लगाना, फिल्म दिखाना, प्रदर्शनी, परिचर्चा एवं विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन कर जनसंख्या शिक्षा के लिए वातावरण का निर्माण किया जा सकता है।

इस प्रकार पर्यावरण के संरक्षण हेतु उपर्युक्त अनेक प्रकार के तरीकों को प्रयोग में लाया जा सकता है। भारत की परम्परागत संरक्षण प्रथायें, संस्कृति, पर्यावरण संरक्षण यात्राएं आदि अनेक पहलू ओर भी हैं जो हमारे देश में पर्यावरण संरक्षण का मुख्य स्रोत है।

पर्यावरणीय नैतिकता (Environmental Ethics)

मनुष्य सदैव एक विकासशील प्राणी रहा है और विकास की इस दौड़ में उसने पर्यावरण के विभिन्न स्रोतों का अतिदोहन किया है। इसके कारण पर्यावरण के विभिन्न घटकों में असन्तुलन उत्पन्न हो गया है। मनुष्य ने अपनी सुख–सुविधाओं को पूरा करने के लिए पर्यावरण का समग्र रूप से नुकसान किया है। अतः यह आवश्यक है कि मनुष्य वातावरण का उचित प्रबन्धन करें ताकि पर्यावरण के अलावा ऊर्जा स्रोतों, वानिकी, कृषि, भूमि का उचित उपयोग, औद्योगीकरण एवं जनसंख्या नियंत्रण जैसे विषयों की सारगर्भित रूप से व्याख्या कर विकास कर सके।

मनुष्य के गैर जिम्मेदाराना रवैये के कारण ही प्रकृति में अनेक आपदाओं जैसे चक्रवात, भूकम्प, सुखा, असमय वर्षा, अतिवृष्टि व बाढ़ आदि का उसे सामना करना पड़ रहा है। इसीलिए यह अत्यधिक आवश्यक है कि हम किस प्रकार से प्रकृति एवं पर्यावरण से व्यवहार करें।

पर्यावरण नैतिकता से यह तात्पर्य है कि वे नियम जो हमें पर्यावरण एवं उसके विभिन्न घटकों को नियंत्रित रूप में, उचित व श्रेष्ठ प्रकार का व्यवहार करने की शिक्षा प्रदान करें। पर्यावरण को संरक्षित करने के लिए आवश्यकता इस बात की है कि हमे किस प्रकार से पर्यावरण एवं प्रकृति के साथ अपने आपको ढाले न कि हमारी आवश्यकताओं के अनुरूप पर्यावरण को ढाले।

भारतीय संस्कृति, परिवेश, धर्म ग्रंथों, पौराणिक किस्से कहानियों एवं जातक कथाओं आदि में समय–समय पर सामान्य जनमानस के लिए नैतिक आचार के नियमों की आचार संहिता लागू की गयी थी, जिसकी पालना करना प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य

था। इस प्रकार निम्नलिखित अनेक नैतिक विचार है –

;i) भगवान महावीर ने अहिंसा परमोधर्म का सिद्धान्त प्रचारित किया जिसके अनुसार किसी भी जीव के प्रति हिंसा को अपराध की श्रेणी में रखा गया। जीवों के प्रति दया रखना, मांस न खाना एवं प्रकृति की देखरेख करना आदि नियम जीवन के प्रमुख आधार थे।

(ii) हमारे शास्त्रों में सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र, पृथ्वी, जल, वायु एवं अग्नि को देवता का दर्जा दिया गया है। इसीलिए जल, वायु व मृदा प्रदूषण एवं पेड़ों को काटना पाप माना गया है।

(iii) चरक संहिता में वनों की कटाई सर्वाधिक वर्जित कृत्य माना गया है। वन कटाई को मानव प्रजाति व उसके विकास के लिए घातक माना गया।

(iv) मत्स्य पुराण में तो एक वृक्ष को दस मानव पुत्रों के समान माना गया है। इसी कारण वृक्ष पूजन, शाखाओं पर लच्छा बांधना, दीप जलाना आदि उसकी सुरक्षा के उपाय थे।

(v) हिन्दू धर्म में अनेक प्राणियों को देवी–देवताओं की सवारी के रूप में मान्यता प्रदान की गयी है जो एक प्रकार से उनकी सुरक्षा को सुनिश्चित करती है। जैसे चूहा–गणेश जी, शेर–दुर्गा, गिद्द–विष्णु, हाथी–इन्द्र, उल्लू–लक्ष्मी का वाहन माना गया है।

(vi) सम्राट अशोक ने पादपों व प्राणियों की सम्पदा के संरक्षण हेतु अनेक उपाय किए। इन सभी की सुरक्षा हेतु अलग–अलग प्रकार के दण्ड निर्धारित किए तथा प्राकृतिक सम्पदा की सुरक्षा सुनिश्चित की।

(vii) हिन्दू पंचांग में भी विभिन्न महत्वपूर्ण तिथियों को पर्यावरण की सुरक्षा से जोड़ा गया है। जैसे – कार्तिक पूर्णिमा को पुष्कर पूर्णिमा मानकर जल स्रोतों की सुरक्षा का संकल्प लेना, भाद्रपद दशमी को खेजड़ी की पूजा कर उसकी सुरक्षा का संकल्प लेना, वैशाखी पूर्णिमा को पीपल पूनम का दर्जा देना, उसको जल पिलाना, श्रावण मास की अमावस्या को हरियाली अमावस्या के रूप में मनाना, गांवों–कस्बों में मेले लगाना तथा प्रकृति के स्वरूप का अवलोकन करना आदि।

(viii) बौद्ध, ईसाई एवं इस्लाम के अनुयायी भी पर्यावरण की रक्षा का संदेश देते है। जैसे कि बोधिवृक्ष की मान्यता बोध में, खजूर वृक्ष को इस्लाम में, क्रिसमस ट्री की मान्यता ईसाई धर्म में पवित्रता से जुड़ी है।

(ix) भारत के संविधान में भी पर्यावरण की सुरक्षा व संरक्षण हेतु 1976 में दो धाराएं 48(A) एवं 51(A)G ाामिल की गयी है। धारा 48-A में समस्त राज्य सरकारों को पर्यावरण की सुरक्षा एवं उसके उचित रख–रखाव का जिम्मा सौंपा है तथा धारा 51A(G) के अन्तर्गत भारतीय नागरिक का मूल अधिकार है कि वे पर्यावरण की सुरक्षा करें एवं जीवों के प्रति दया व करूणा का भाव रखें।

अतः यह सिद्ध होता है कि पर्यावरण की सुरक्षा से संबंधित हमारे धार्मिक अवधारणाओं, पौराणिक रीति–रिवाजों, ऋषि–महर्षियों, प्राचीन ग्रंथों एवं नैतिक कथनों में तथा भारतीय संविधान में इसके महत्व को ध्यान में रखते हुए धाराएं शामिल की गई हैं।

पर्यावरण संरक्षण में समुदाय की भागीदारी (Community Participation in Environmental Protection)

पर्यावरण के संरक्षण में समुदायों की भूमिका भी प्रमुख रही है। भारत में अनेक आन्दोलन सामूहिक रूप से वनोन्मूलन के विरुद्ध हुए हैं। इनमें से समुदाय की पर्यावरण संरक्षण में भूमिका का सबसे अच्छा उदाहरण चिपको आन्दोलन के रूप में है।

चिपको आन्दोलन (Chipco Movement)

आदिकाल से ही प्रकृति की रक्षा के लिए भारतीय मानव समाज तत्पर रहा है। प्रकृति के प्रति उसके संरक्षण एवं बलिदान के लिए राजस्थान के जोधपुर में स्थित खेजड़ली गांव की अद्‌भुत बलिदान कथा, दुनिया के पर्यावरण प्रेमियों एवं प्रकृति प्रेमियों के लिए एक प्रेरणात्मक स्रोत के रूप में है। इसी घटना को चिपको आन्दोलन की शुरूआत माना जाता है।

खेजड़ली बलिदान – राजस्थान जो राजपूताना के नाम से प्रख्यात था। इसी का एक राज्य था मारवाड़ जोधपुर जिसकी जागीर खारड़ा में खेजड़ली नामक ग्राम स्थित था। 1731 में राजा अभय सिंह ने जोधपुर में एक महल का निर्माण करवाया जिसमें लकड़ियों की आवश्यकता पड़ी। महाराजा ने गिरधर भण्डारी के नेतृत्व में एक दल लकड़ियाँ लाने के लिए खेजड़ली के जंगल में रवाना किया। जब खेजड़ली के जंगलों से लकड़ियाँ काटने का शुरू हुआ तो उसके आस–पास के 83 गांवों के लोग एकत्रित होकर उसका विरोध करने लगे। लेकिन गिरधर भण्डारी पर इसका कोई असर नहीं पड़ा।

इस आन्दोलन का नेतृत्व अमृता देवी कर रही थी जिसमें उसकी तीन पुत्रियाँ आसू देवी, भागू देवी एवं रतनी देवी सहित 83 गांवों के लोग शामिल थे। दो दिन की समझाइश के पश्चात् भी गिरधर भण्डारी नहीं माना तो अमृता देवी ने पेड़ों को बचाने के लिए नारा दिया –

"सर सांटे रुख बचे तो भी सस्तो जाण"

इस प्रकार अमृता देवी उसकी तीनों पुत्रियाँ एवं अनेक लोग

वृक्षों से लिपट गये। इसके पश्चात् भी राजा के लोग कुल्हाड़ी चलाने से नहीं रुके एवं 363 व्यक्ति पेड़ों से कट कर मर गये। जब यह बात जोधपुर के राजा अभय सिंह को पता चली तो उन्होंने तुरंत पेड़ों की कटाई बंद करवायी एवं वहाँ आकर लोगों से माफी मांगी।

खेजड़ली गांव में उन लोगों के बलिदान स्वरूप एक स्मारक का निर्माण किया गया है। भारतीय पंचांग के अनुसार भाद्रपद शुक्ल दशमी को वहाँ मेला लगता है। उन दिव्य आत्माओं की पूजा कर आशीर्वाद लिया जाता है।

उत्तराखण्ड आन्दोलन – चिपको आन्दोलन का दूसरा उदाहरण उत्तराखण्ड का है। इसके तीन जिलों उत्तरकाशी, चमोली एवं पिथौरागढ़ की सीमाएं चीन से लगती है। यहाँ के लोगों का व्यवसाय वनों पर निर्भर था। 1962 में भारत चीन युद्ध के बाद परिस्थितियों में बदलाव आया। सीमा सुरक्षा के लिए वहाँ पर सड़क मार्ग का निर्माण करना पड़ा तथा चीन व तिब्बत से उत्तराखण्ड के लोगों का हथकरघा व ऊन उद्योग समाप्त हो गया। सड़क निर्माण के साथ ही हिमालय की अथाह सम्पदा ठेकेदार, माफिया एवं सरकार की नजर में आ गई। असुरक्षित खनन, सड़क निर्माण, जल विद्युत परियोजनाओं एवं पर्यटन के फलस्वरूप वनों की कटाई शुरू हो गयी। इन सबके परिणामस्वरूप सन् 1970 में प्रलयकारी बाढ़ आयी। वहाँ के निवासियों की आजीविका संकट में आ गई। उसके बाद चण्डी प्रसाद भट्ट ने वनों के विनाश को रोकने के लिए ग्रामवासियों को संगठित कर 1973 से चिपको आन्दोलन आरंभ कर वनों के काटने को रोकने का कार्य किया।

चिपको आन्दोलन की वास्तविक सफलता व गति श्रीमती गौरा देवी की घटना के बाद मिली। गौरा देवी चिपको वुमन के रूप में विख्यात है। 22 वर्ष की आयु में इनके पति का देहांत हो गया था। चण्डी प्रसाद भट्ट ने इन्हें चमोली जिले के रेणी गांव की महिला मंगल दल का अध्यक्ष बनाया। 1974 में रेणी गांव के 2451 पेड़ों को काटने का निर्णय किया तो इसके विरोध में 23 मार्च 1974 को गोपेश्वर में गौरा देवी के नेतृत्व में एक रैली का आयोजन हुआ। तत्पश्चात् प्रशासन ने 26 मार्च को रेणी गांव के सभी मर्दों को चमोली में सड़क निर्माण की क्षतिपूर्ति हेतु बुला लिया एवं पीछे से जंगल काटने वाले ठेकेदारों को निर्देशित किया कि वे रेणी जंगल के पेड़ों को काट कर ले जावें। लेकिन इस बात की जानकारी गौरा देवी को लग गई। गौरा देवी अपने साथ–साथ 21 महिला साथियों को लेकर जंगल पहुँच गई। ठेकेदार एवं जंगलात के लोगों ने उनको डराया धमकाया परन्तु गौरा देवी ने डटकर उनका मुकाबला किया और कहा कि जंगल हमारा मायका है, इसको काटने से पहले हमारे प्राण ले लो, यह कहते हुए सभी महिलाएं पेड़ों से चिपक गई। आखिरकार ठेकेदार एवं उसके श्रमिकों को गौरा देवी के समक्ष अपने हथियार डालने पड़े और जंगल बच गया।

इस आन्दोलन ने सरकार, वन प्रेमियों एवं वैज्ञानिकों का ध्यान अपनी ओर खींचा। सरकार ने डॉ. वीरेन्द्र कुमार की अध्यक्षता में एक जांच समिति का गठन किया। इसने जांच के बाद यह पाया कि रेणी गांव के जंगलों के साथ अलकनंदा, ऋषि गंगा, पाताल गंगा एवं कुवारी पर्वत के जंगलों की सुरक्षा पर्यावरणीय दृष्टि से आवश्यक है।

इस कार्य हेतु श्रीमती गौरा देवी को 1986 में तत्कालीन प्रधानमंत्री द्वारा वृक्षों की रक्षा के लिए प्रथम वृक्षमित्र पुरस्कार प्रदान किया गया। गौरा देवी का निधन 4 जुलाई 1991 को हुआ। चिपको आन्दोलन में उनके अदम्य साहस व दूरदर्शिता के कारण उन्हें इस आन्दोलन के सूत्रधार एवं जननी कहा जाता है।

सुन्दरलाल बहुगुणा का योगदान – गौरा देवी के साहसिक कदम के पश्चात् सभी पर्यावरणविदों को आपस में जोड़ने का कार्य किया। टिहरी गढवाल के समाजसेवी सुन्दर लाल बहुगुणा भी इस मुहिम से जुड़ गये तथा उन्होंने इस आन्दोलन को विस्तार दिया तथा इस आन्दोलन को जल, जमीन व जंगल को जीवन की सुरक्षा से जोड़ दिया और यह चिपको आन्दोलन का घोष वाक्य बना –

"क्या है जंगल के उपकार, मिट्टी, पानी और बयार
मिट्टी, पानी और बयार, जिन्दा रहने के आधार"

सुन्दर लाल बहुगुणा ने 1981 से 1983 तक गांव–गांव जागरूकता लाने के लिए 5000 कि.मी लम्बी ट्रान्स–हिमालय पद यात्रा की। चिपको आन्दोलन के फलस्वरूप 1980 में वन संरक्षण अधिनियम बना तथा केन्द्र सरकार ने पर्यावरण मंत्रालय का गठन भी किया। प्रकृति का सन्तुलन बनाये रखने के लिए वन्य जीवों का संरक्षण एक सतत् प्रक्रिया है। अतः चिपको आन्दोलन की आवश्यकता हमेशा रहेगी।

भारतीय परम्पराएं एवं पर्यावरण (Indian Traditions and Environment)

भारतीय संस्कृति मूलतः प्रकृति पूजक रही है। इसलिए हमारी संस्कृति को अरण्य संस्कृति भी माना जाता है। हम प्रकृति के प्रत्येक पशुपक्षी तथा पृथ्वी आदि की पूजा करते हैं। भारतीय संस्कृति प्रकृति एवं पर्यावरण से तालमेल बिठाकर चलने की है।

भारतीय सभ्यता एवं परम्परा में जैविक व अजैविक घटकों का ईश्वर का स्वरूप माना गया। प्रत्येक कण–कण में ईश्वर या परमात्मा का निवास माना गया इसीलिए प्राकृतिक उत्पादों का सम्मान एवं आवश्यकतानुसार न्यूनतम उपयोग करने की मान्यता है।

भारतीय मान्यतानुसार पृथ्वी को माँ माना गया, चन्द्रमा को मामा एवं सूर्य को पिता का दर्जा दिया गया है। इसी प्रकार शरीर को पंच तत्वों आकाश, वायु, जल, अग्नि एवं मिट्टी से बना हुआ माना जाता है। भारतीय सभ्यता में जैविक घटकों जैसे चींटी से लेकर हाथी तक को पूजा जाता है। हंस जैसे ब्रह्मा की सवारी है तो गरूड़ विष्णु की, बैल शंकर का वाहन है तो शेर दुर्गा माता का, गधा शीतला माता का वाहन है तो मछली झूलेलाल की प्रिय मानी गयी है।

भारतीय संस्कृति अवतारों को मानने वाली संस्कृति है जहाँ वराह से बुद्धावतार तक तेइस एवं भविष्य में होने वाले काल्की अवतार तक 24 अवतार मानते हैं। नृसिंह अवतार जैसे पांच अवतार तो प्राणी है। इसी प्रकार राम की सेना में भी वानर, भालू एवं अन्य जंगली पशु थे। हनुमान आज भी विश्व में सबसे अधिक पूजे जाने वाले देवता है। भारतीय व्यक्ति आदिकाल से ही प्राणियों को सम्मान देने वाला एवं उनके लिए त्याग करने वाला रहा है।

भारतीय संस्कृति में त्योहारों को भी प्राणियों की रक्षा–सुरक्षा से जोड़ा गया है। इसमें मकर संक्रान्ति पर पशुओं को चारा खिलाना, नागपंचमी पर नाग की पूजा करना, श्राद्ध पक्ष में कौओं को खाना खिलाना आदि शामिल है।

प्राणियों के समान पौधों को भी भारतीय व्यवस्था में बहुत महत्वपूर्ण माना गया है। अनेक पौधों में विष्णु का, खेजड़ी में देवी का, हार श्रृंगार में हनुमान जी का तो तुलसी व कमल में लक्ष्मीजी का वास माना गया है।

पूजा थाली में अनेक पुष्पी पादप गुलाब, मोगरा एवं चमेली, नारियल (श्रीफल), सुपारी, मूंग, चंदन, हल्दी, पान, केसर, चावल, गेहूं, चना, गुगल, लोबान एवं अनेक ऋतु फलों के बिना अधूरी मानी जाती है। आयुर्वेद में पृथ्वी पर प्रत्येक पादप का औषधीय महत्व माना गया है। वृक्षों का काटना अपराध की श्रेणी में माना गया है। पेड़ों से प्राप्त होने वाली सुखी एवं गिरी हुई लकड़ी को ही ईंधन के रूप में उपयोग लेना सामाजिक नियम माना गया।

अरण्य संस्कृति एवं स्मृति वन – भारतीय संस्कृति मूलतः प्रकृति की पूजक रही है इसीलिए इसे अरण्य संस्कृति कहा जाता है। इस प्रकृति के सभी पादपों, प्राणियों एवं पक्षियों की पूजा की जाती है। हमारी संस्कृति प्रकृति का सामाजिक व धार्मिक रूप से न्यूनतम उपभोग करने की मान्यता प्रदान करती है। लेकिन आजकल प्रकृति के साथ–साथ छेड़छाड़, अतिदोहन एवं विवेकहीन उपयोग के दुष्परिणाम सभी भोग रहे हैं।

अतः आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य प्रकृति के साथ छेड़छाड़ न करे तथा उसकी रक्षा का राष्ट्रीय एवं संवैधानिक कर्तव्य समझे।

भारतीय संस्कृति से ओतप्रोत होकर "स्मृति वन" की अवधारणा प्रस्तुत की है जिसका भाव यह है कि कोई भी व्यक्ति अपने पूर्वजों, माता–पिता एवं परिजनों की स्मृति में पौधा लगायें तथा अपने प्रियजनों का स्वरूप मानकर सेवा करें। वृक्ष प्रकृति की अनुपम कृति है तथा अपने जीवन की किसी भी विशेष याद को पेड़–पौधों से जोड़ना प्रकृति के लिए आभार व्यक्त करने का साधन है।

इसी प्रकार विवाह, वर्षगांठ, जन्म दिवस, सफलता के सुखद क्षणों व जीवन की किसी भी अन्य घटना को याद को चिरस्थायी बनाने के लिए पौधा रोपकर उसे गोद लेकर व बाग लगाकर पुष्पित–पल्लवित करें। यह भावना रखकर ही हम स्मृति वन की अवधारणा को सिद्ध कर सकते हैं।

वर्षा जल पुनर्भरण
(Rain Water Harvesting)

भारतीय जनमानस में पानी को एक देवता की तरह माना गया है। जन्म, विवाह, शुभ काम तथा मृत्यु के समय तक पानी को जीवन का अभिन्न अंग माना गया। पानी के लिए कहा गया है कि –

जल है तो जीवन है एवं जल है तो कल है।

विश्व की सभी एवं भारतीय सभ्यताएं पानी के पास यानि नदियों के पास ही विकसित हुई थी एवं पानी का हर स्रोत एक सामाजिक पूंजी के रूप में माना जाता रहा है। कोई भी शासक आया उसने पानी की व्यवस्था के लिए तालाब, बावड़ी या कुओं का निर्माण या उनका पुनः रक्षण अवश्य किया। उनसे पानी पीने एवं कृषि के लिए उपयोग होता था। आज भी हर सभ्यता में पानी का महत्व अधिक है। हमारे तो सारे पवित्र तीर्थ एवं धार्मिक स्थल जल के स्रोत के रूप में ही पूजनीय है। जल के नजदीक लगभग आधे से अधिक पर्यटक स्थल मौजूद हैं।

पीने के जल का प्रकृति में मुख्य स्रोत वर्षा है। वर्षा से प्रकृति में अथाह जल बरसता है। परन्तु दुर्भाग्य से या हमारी व्यवस्थाओं की कमी से वर्षा का जल बहकर चला जाता है। इस वर्षा के जल को इकट्ठा करके हम हमारी पीने के पानी की तथा अन्य कार्यों के पानी की पूर्ति कर सकते हैं।

वर्षा के जल को उचित एवं साफ सफाई से इकट्ठा कर उसका उपयोग करना वर्षा जल पुनर्भरण (Rain water harvesting) कहलाता है।

वर्षा जल पुनर्भरण की प्रचलित विधियां

वर्षा जल को एक स्थान पर इकट्ठा करने के अनेकों प्रकार स्थान एवं सुविधाओं के अनुसार प्रचलन में रहे हैं एवं अनेकों स्थानों

पर वर्तमान में भी वो पानी की पूर्ति का एक महत्वपूर्ण स्रोत है।

महत्वपूर्ण प्रचलित तरीके हैं – 1. झीलें 2. तालाब 3. नाड़ी 4. बावड़िया 5. टांके 6. घरेलू टैंक।

1. झीलें (Lakes) – झीलें वर्षा जल के संग्रहण का एक महत्वपूर्ण तरीका रहा है। वैसे झीलें प्राकृतिक भी होती हैं परन्तु मानव ने प्राकृतिक व्यवस्था को कृत्रिम रूप देकर भी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की है। कृत्रिम झीलों के लिए ऐसा स्थान चुनते हैं जहाँ वर्षा का जल अधिक इकट्ठा हो तथा जो वन्य जीवों एवं स्वयं मानवीय बस्तियों के लिए पानी की पूर्ति का माध्यम बन सके। अनेक बार झीलें वहाँ भी बनाई जाती है जहाँ से एक से अधिक मानवीय बस्तियों के लिए लम्बे समय तक पानी की पूर्ति करती हो। इनका निर्माण मानवीय एवं आर्थिक क्षमता एवं शासकीय व्यवस्था के अनुरूप विस्तृत भूखण्ड का उपयोग करके किया जाता था। हजारों वर्ष पूर्व बनाई गई झीलें आज भी पानी की पूर्ति का एक अद्‌भुत स्रोत है एवं अनेक झीलों का उपयोग तो आज तक पीने के पानी के अतिरिक्त कृषि एवं पर्यटन में भी हो रहा है। राजस्थान में ऐसी अनेकों झीलें उदाहरण है – जैसे उदयपुर को तो झीलों की नगरी भी कहते हैं। माउण्ट आबू में नक्की झील अद्‌भुत उदाहरण है। उदयपुर की जयसमंद झील मानव निर्मित झीलों में सबसे बड़ी झीलों में से एक है।

वर्तमान में जैसे बहती नदियों को रोक कर बांध बनाते हैं। ऐसा झीलों में नहीं के बराबर होता था। नदी को रोकने का प्रावधान नहीं था। पहाड़ों एवं ऊँचाई से आते वर्षा जल को रोक कर झीलें बनाई जाती है। झीलों पर आवश्यकतानुसार स्थान बनाए जाते थे जहाँ से बस्ती वाले पानी अपने पात्रों में भरकर ले जाते हैं इन स्थानों को घाट (Ghat) का नाम दिया जाता है। झीलों के रख–रखाव की भी उचित व्यवस्था होती थी। वैसे इनके रख–रखाव का सामूहिक एवं सामाजिक दायित्व होता था। जैसे समय–समय पर श्रमदान के रूप में झीलों की सफाई करना, उसमें साबुन का उपयोग ना करने देना, कपड़ों का ना धोना, कपड़े धोने की अलग से व्यवस्था करना एवं पशुओं को उसमें प्रवेश करने से रोकना एवं पशुओं के पानी पीने की अलग स्थान तय करना यह शामिल था।

2. तालाब (Pond) – छोटी झीलों को तालाब कहते हैं। इनका निर्माण भी सामूहिक रूप से जहाँ वर्षा जल ऊँचे स्थानों से इकट्ठा होकर आता है, वहाँ किया जाता है। एक बस्ती के पीने के एवं आवश्यकतानुसार कृषि के लिए पानी की पूर्ति के लिए तालाब का उपयोग होता था। पशुओं के पानी पीने के लिए अलग व्यवस्था होती थी।

तालाब बस्तियों के निकट बनाते थे, जिनसे आसानी से बस्ती वाले अपनी आपूर्ति के लिए पानी ले सकते हैं। पशुओं के लिए तालाब के किनारे एक अलग स्थान पर पानी पीने का स्थान होता था। तालाबों के आसपास के क्षेत्र में पशु चराने, शौच करने एवं कृषि कार्य करने को पूर्णतया प्रतिबंधित करते थे। इनकी समय–समय पर सफाई एवं सुरक्षा की समीक्षा होती थी। तालाबों पर भी घाटों का निर्माण करते थे, जहाँ पर पानी भरने के लिए आसानी से व्यक्ति जा सकता था। अनेकों तालाबों पर धार्मिक क्रियाकलाप भी करते थे जैसे त्योहारों पर या अन्य धार्मिक उत्सवों पर तालाबों पर उत्सव मनाते थे एवं इनकी पूजन भी की जाती थी। इसके अतिरिक्त बच्चा पैदा होने पर जलवा पूजन तालाब के किनारे बने घाट या उचित स्थान पर होती थी। तालाबों के निकट मन्दिर या सन्तों के आश्रमों का प्रावधान होता है जिससे मन्दिर का पुजारी तालाब की सुरक्षा में अपना योगदान दे सके।

3. नाडी (Nadi) – कृषि क्षेत्र या वन में किसी छोटे से स्थान पर उस स्थान के आसपास का वर्षा जल इकट्ठा हो जाता है वो छोटा स्थान नाडी कहलाता है। इसके निर्माण की आवश्यकता कम होती है, प्राकृतिक रूप से यह स्थान बन जाता है। बस उसका संरक्षण या रखरखाव किसानों या फिर आसपास के ग्रामीणों का होता है। नाडी के चारों तरफ घाट नहीं बनाए जाते है। बस उस नाडी में जिन स्थानों से पानी आता है, उस स्थान की साफ–सफाई का ध्यान रखा जाता है। नाडी के पानी का उपयोग आवश्यकता होने पर ग्रामीण भी कर सकते हैं, वैसे किसानों के लिए नाडी का महत्व अधिक होता है।

4. बावड़ी (Bawadi) – वर्षा जल संग्रहण का एक अद्‌भुत तरीका है। बावड़ी का निर्माण जहाँ पर पानी आसानी से इकट्ठा हो सकता है वहाँ कराया जाता है। इस व्यवस्था में उस स्थान को विशेष निर्माण से सुरक्षित किया जाता है। बावड़ी अनेक बार परिवार विशेष या ग्राम विशेष के लिए उपयोग के लिए बनाई जाती थी। वहाँ स्नान की भी व्यवस्था करवाई जाती थी। लेकिन मुख्य उद्देश्य वर्षा जल का ग्राम के उपयोग के लिए होता है। बावड़ियाँ कलात्मकता से भी भरपूर होती है। अनेक बावड़ियाँ पर्यटन की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हो गई है। बावड़ियों में विशेषकर पानी तक पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ बनाई जाती है।

5. टांका (Tank) – इस विधि में जहाँ पर आसपास के क्षेत्र से पानी इकट्ठा हो सकता है वहाँ एक जमीन में एक टैंक बना देते हैं। उसमें वर्षा जल इकट्ठा होता है तो अनेक महीनों पीने के पानी की व्यवस्था हो जाती है। इसे पूर्ण सुरक्षा से ढक दिया जाता है तथा आवश्यकता होने पर इस पानी का उपयोग इससे किया जा सकता है। जब ये खाली हो जाता है तो इसकी ठीक से सफाई भी कर दी जाती है। इसे बंद करने से पहले इसमें ठीक से हवा का आगमन हो

इसकी भी व्यवस्था की जाती है।

6. घरेलू टैंक (Domestic tanks) – घरों का पानी भी छतों से इकट्ठा होकर जब बहता है तो इसे भी घर के एक भाग में टैंक बनाकर इकट्ठा कर लिया जाता है जो अनेक माह तक पानी की पूर्ति कर सकता है। इसी का सुधरा रूप आधुनिक (Rain water harvesting system) वर्षा जल संरक्षण प्रणाली है।

वर्षा जल संरक्षण प्रणाली (Rain Water Harvesting System)

इसमें पहले टैंक एवं छतों की ठीक से सफाई कर ली जाती है तथा जब भी वर्षा आती है तो पाइपों के माध्यम से छतों पर इकट्ठे पानी को टैंक में डाल दिया जाता है। इस विधि को आजकल हर घर में अपनाने लग गए हैं। इससे पानी का सदुपयोग भी बढ़ा है तो पानी व्यर्थ भी नहीं बहता। राजस्थान सरकार ने तो एक आदेश जारी करके मकान बनाने से पूर्व टैंक बनाने का नियम ही बना दिया जिससे वर्षा जल का संरक्षण एवं सदुपयोग हो सके।

वर्षा जल पुनर्भरण ना केवल घरों में ही अपनाना चाहिए अपितु कार्यालयों, सामाजिक भवनों में, विद्यालयों में, कॉलेजों एवं सभी धार्मिक एवं अन्य स्थानों पर भी होना चाहिए। जिससे पानी की समस्या से छुटकारा मिल सके।

वर्षा जल पुनर्भरण का कार्य किसान भाई भी अपने खेतों में कर सकते हैं। बस खेती की थोड़ी जमीन जिस स्थान पर पानी इकट्ठा हो सकता हो को ओर खुदाई करवा कर पानी इकट्ठा होने के लिए रखना चाहिए। यह पानी कृषि के लिए अमृत सिद्ध हो सकता है। इसका उपयोग पशुपालन में भी संभव है। यदि खेत में कुआ है तथा थोड़ा पानी वर्षा का उस कुएं भी भरे तो वो उस कुएं के लिए अच्छा सिद्ध हो सकता है। वर्षा जल पुनर्भरण के काम को एक क्रान्ति के रूप में अपनाना चाहिए क्योंकि इसी से एक अच्छा भविष्य हम देश एवं समाज का बनाने में सहयोग दे सकते हैं। उद्योगों में भी इसे लागू करके हम जल की बचत भी कर सकते हैं तो उद्योगों का एक सामाजिक उपयोग भी इसके माध्यम से हो सकता है।

यदि किसी कारण से घरों में वर्षा जल पुनर्भरण के लिए टैंक नहीं बना सकते तो भी आजकल बाजारों में मिलने वाली प्लास्टिक की टंकियों का भी उपयोग हम वर्षा जल पुनर्भरण में कर सकते हैं।

वर्षा जल पुनर्भरण आधुनिक जगत एवं भविष्य के लिए अति आवश्यक है। बढ़ती जनसंख्या, जीवन को एक सुखमय रूप से जीने के लिए पानी प्रथम आवश्यकता है। पानी की सुरक्षा एवं पानी का मितव्ययता से उपयोग करना हमारी पुरातन परम्परा है। यह भविष्य में भी पूरे दायित्व के साथ निभानी चाहिए।

पानी को ठीक से आवश्यकता के अनुसार ही खर्च करना चाहिए, पानी की सुरक्षा एवं बचाव करना चाहिए तथा हर घर में वर्षा जल को बचाया जाना चाहिए। इसे बिना काम के नहीं बहाना चाहिए। यदि हमें कृषि भी करनी है तो बूंद–बूंद सिंचाई पद्धति से करनी चाहिए जिसमें पानी पौधों की जड़ों में बूंद–बूंद करके दिया जाता है, इससे पानी की बचत होती है। वर्षा जल पुनर्भरण से भूमिगत जल में भी बढ़ोतरी होती है जिसकी वर्तमान समय में महत्ती आवश्यकता है।

सरकार ने सामुदायिक जल संरक्षण के लिए यानि वर्षा जल पुनर्भरण के लिए सारे देशवासियों का सहयोग मिल जाए इसके लिए भामाशाहों के सहयोग से पुराने जल भरण के साधन जैसे बावड़ियों एवं अन्य छोटे बड़े तालाबों की मरम्मत एवं संरक्षण का काम भी चला रखा है इसे जल स्वावलम्बन योजना भी कहते हैं।

वर्षा जल पुनर्भरण के लिए आधुनिक योजना में भवनों की छतों से जो पानी इकट्ठा होता है उसे पाइपों द्वारा इकट्ठा कर नीचे एक भूमिगत टैंक में इकट्ठा किया जाता है। वर्षा आने का अनुमान लगाकर पहले छतों एवं पाइपों के साथ भूमिगत टैंक की सफाई की जाती है फिर जब वर्षा आती है तो साफ पानी छतों से पाइपों के माध्यम से भूमिगत टैंक में इकट्ठा होता रहता है जिसका उपयोग व्यक्ति अनेकों माह तक कर सकता है। सरकारें ऐसा करने में आवश्यक सहयोग भी करती है एवं इस पद्धति का नाम रैन वाटर हारवेस्टिंग (Rain water harvesting) नाम दिया गया है।

वर्षा जल को इकट्ठा करके इसकी स्वच्छता बनी रहे इसका भी पूरा–पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए।

बंजर भूमि सुधार (Waste Land Development)

हमारी पृथ्वी ना–ना रूप वाली है, कही सघन वन, कहीं सागर कहीं ऊँचे पहाड़ तो कहीं नदियों के किनारे मैदान तो कहीं निर्जन स्थल जहाँ ना तो कोई वनस्पति उग पाए एवं ना ही कोई कृषि की फसलें।

बंजर भूमि सभी देशों में पाई जाती है कहीं कम तो कहीं अधिक। भारत जो पूरी पृथ्वी की 2.4% भूमि पर बसा है लेकिन इसकी जनसंख्या विश्व की जनसंख्या का 16% भाग है। इस देश में 68.35 मिलियन हैक्टेयर भूमि बंजर भूमि के रूप में है। सामान्यतया यदि एक हैक्टेयर में कोई फसल यदि 5 क्विंण्टल भी उत्पन्न हो तो यहाँ 340.00 मिलियन क्विंण्टल से भी अधिक उत्पादन संभव हो सकता है जिससे कितने ही लोगों की भूख मिट सकती है। लेकिन बंजर भूमि होने के कारण उत्पादन शून्य होता है। यह हमारे देश के सामने एक बहुत बड़ी चुनौती है।

इस चुनौती को स्वीकार कर भारत सरकार में 1985 में राष्ट्रीय बंजर भूमि विकास बोर्ड का गठन किया तथा इसे वन एवं पर्यावरण

विभाग को दिया परन्तु फिर 1992 में इस कार्य को ग्रामीण विकास एवं भूमि सुधार विभाग (Rural Development and Land Resources) को दिया गया जो सतत् प्रयत्न कर रहा है कि बंजर भूमि को सुधार कर उसे कृषि या वन के उपयोग के योग्य बनाया जाए। उपरोक्त आंकड़े राष्ट्रीय रिमोट सेन्सिंग एजेन्सी (National Remote Sensing Agency - NRSA) के हैं।

भारत में बंजर भूमि के रूप में कॉमन प्रोपर्टी रिर्सोसेस (Common Property Resources - CPRs) जिनको सामान्य जनता उपयोग करती है, जैसी सार्वजनिक भूमि जैसे चारागाह, कचरा डालने की भूमि भी बंजर भूमि में परिवर्तित होती जा रही है। जहाँ देश में 23% वन होने चाहिए वहाँ 1999 के आंकड़ों के अनुसार 19% भूमि पर ही वन हैं जो वर्तमान में ओर भी कम हो गए हैं। लगभग 31 मैट्रिक हैक्टेयर भूमि जिस पर वन थे, वो बंजर भूमि हो गई।

बंजर भूमि होने के कारण

बंजर भूमि होने के कारणों को हम दो प्रमुख भागों में बांट सकते हैं – 1. प्राकृतिक (Natural) एवं 2. मानवीय (By Human)

1. प्राकृतिक (Natural) – बंजर भूमि बढ़ने के प्राकृतिक कारणों में निम्न प्रमुख हैं – i) बाढ़ (Flood), ii) तेज हवाएं (High speed wind), iii) सूखा (Drought), iv) भूस्खलन (Landslide), v) लवणीय मृदा (Salty soil)।

2. मानवीय (By human) – बंजर भूमि बढ़ाने में मानवीय कारण निम्न प्रमुख हैं – i) वनोन्मूलन (Deforestation), ii) झूमिंग कृषि (Jhuming cultivation), iii) कचरा संग्रहण (Dumping), iv) कृषि रसायनिकों का उपयोग (Use of agro chemicals)।

प्राकृतिक कारण (Natural Cause)

बंजर भूमि बढ़ने के निम्न प्राकृतिक कारण हैं –

(i) बाढ़ (Floods) – तेज वर्षा से बाढ़ आती है तथा बाढ़ से ऊपरी उपजाऊ मिट्टी की परत बहकर चली जाती है तथा बची हुई बिना ह्यूमस की भूमि बंजर भूमि हो जाती है। बाढ़ से पेड़ों की भी भारी कमी हो जाती है क्योंकि बाढ़ में पेड़ उखड़ जाते हैं तथा अनेक तो बह भी जाते हैं। ऐसे में पेड़ विहिन भूमि में पुनः ह्यूमस बनने में काफी समय लग जाता है तब तक भूमि बंजर हो जाती है। बाढ़ में पौधों के भूमि में पड़े बीज भी बहकर चले जाते हैं।

अनेक बार बाढ़ से जमीन में गहरी खाइयाँ बन जाती हैं तथा इन खाइयों में बंजर मिट्टी ही बचती है।

(ii) तेज हवाएं (High speed wind) – तेज हवाएं भूमि की उर्वरा परत को उड़ा कर अन्य स्थानों में ले जाती है तथा बची भूमि बंजर हो जाती है। जहाँ तेज हवाएं लगातार चलती रहती है वहाँ पर बंजर भूमि अधिक होती है। हवा भी अनेक हल्के बीजों को दूर ले जाती है तो इससे भी बीजों के अभाव में भूमि बंजर हो जाती है। अनेकों बार उर्वरा भूमि पर बंजर भूमि की मिट्टी भी तेज हवाओं से आकर जमा हो जाती है तथा बंजरता बढ़ जाती है।

(iii) सूखा (Drought) – सबसे अधिक प्रभावी कारण बंजर भूमि होने का वर्षा का ना होना अर्थात् सूखा होता है। पानी की कमी से सब तरफ पेड़ सूख जाते हैं तथा बीज उग नहीं पाते तथा बंजर भूमि बन जाती है।

(iv) भूस्खलन (Landslide) – अनेकों क्षेत्रों में भूस्खलन भी बंजर भूमि का कारण संभव है। भूस्खलन से उपजाऊ भूमि की परत को भारी क्षति पहुंचती है तथा भूमि बंजर हो जाती है।

(v) लवणीय मृदा (Salty soil) – भूमि में लवण की मात्रा अधिक हो जाने से पौधे पानी का अवशोषण ठीक से नहीं कर पाते तथा पौधे मर जाते हैं तथा पौधों की कमी होना बंजरपन को बढ़ाता है। भूमि लवणों की मात्रा पानी के लवणों की मात्रा (यदि वहाँ पानी अधिक लवणीय है) से भी बढ़ जाती है। वहाँ सामान्यतया उगने वाले पादप नहीं उग पाते हैं।

मानवीय कारण

बंजर भूमि के लिए मानवीय कारण भी बहुत प्रभावी होते हैं। मानव स्वयं के स्वार्थ के कारण प्रकृति में बहुत हानिकारक गतिविधियाँ करता रहता है। थोड़ा अधिक पाने के लिए अनेक गलत कदम मानव उठा लेता है वो यह भूल जाता है कि प्रकृति पर आने वाली पीढ़ियों का भी अधिकार है। बस वो तो स्वयं के लिए ही सब कुछ करना चाहता है। निम्न प्रमुख मानवीय कारणों से भी बंजर भूमि बढ़ रही है।

(i) वनोन्मूलन – मानव अपने सुख–सुविधा के जीवन के लिए अनियंत्रित रूप से वनों का विनाश कर रहा है। पेड़ों की कमी से वर्षा नहीं हो पाती तथा बंजर भूमि बढ़ जाती है। फर्निचर एवं अन्य सुविधा, जलाऊ लकड़ी व्यापार के लिए मानव वनों का विनाश करने पर तुला हुआ है। तो कहीं अनियंत्रित खनन के कारण भी भूमि बंजर होती जा रही है। सड़क मार्ग या रेलमार्ग बनाने के लिए वनों को नष्ट किया जा रहा है।

(ii) झूमिंग कृषि (Jhuming cultivation) – इसे स्थानान्तरित कृषि कहते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में एवं जहाँ समतल भूमि नहीं मिलती वहाँ पर इस प्रकार की कृषि का प्रचलन है। वहाँ कृषि करने के लिए वनों के एक क्षेत्र को जलाकर नष्ट किया जाता है। जलने के पश्चात् राख से वहाँ एक दो वर्षों तक कृषि के लिए उस जमीन में उपजाऊपन आ जाता है तथा फिर उनको अगली कृषि के लिए पुनः जंगल के एक क्षेत्र को जलाना पड़ता है। ऐसा करने से वन नष्ट होते रहते हैं। यह प्रक्रिया बंजर भूमि को बढ़ाती है। आसाम, त्रिपुरा, सिक्किम सहित सभी पर्वतीय राज्यों में झूमिंग

कृषि की जाती है।

(iii) कचरा डालना (Dumping of wastes) – आधुनिक युग में शहरीकरण को बढ़ावा मिल रहा है। शहरीकरण की दौड़ में कचरा अधिक होने लगा। जहाँ–जहाँ कचरा डाला जाता है वहाँ पर भी बंजर भूमि होने लगती है। क्योंकि कचरे में अधिकतर प्लास्टिक की थैलियाँ एवं प्लास्टिक के अन्य सामान भी होते हैं। वे न तो पानी को जमीन में जाने देता और न ही ह्यूमस बनने देता है। प्लास्टिक कभी भी गलती या सड़ती नहीं है, वे एक लम्बे समय तक वैसी ही बनी रहती है जिससे भूमि बंजर हो जाती है। वैसे प्लास्टिक थैलियों को जलाए जाए तो हानिकारक गैसें बनती हैं जो पर्यावरण प्रदूषण का कारण भी बनती है। भूमि को बंजर बनाने के साथ–साथ पशु यदि इसे खा जाते हैं तो उनकी भी मौत हो जाती है।

औद्योगिक क्षेत्रों से निकलने वाले कचरे से भी भूमि में बंजरता आती है। अनेक उद्योगों से निकला कचरा एवं हानिकारक रसायन अनियंत्रित रूप से भूमि पर फैलते रहते हैं।

(iv) कृषि रसायनों के प्रयोग से (Use of agro-chemicals) – रासायनिक खादों एवं कीटनाशकों के कृषि में अत्यधिक उपयोग के कारण भी भूमि बंजर हो जाती है। रासायनिकों के अधिक उपयोग से उपजाऊ ह्यूमस नष्ट हो जाती है तथा भूमि की उपजाऊपन के कम होने के साथ–साथ उसमें जहर की मात्रा भी बढ़ जाती है जो सीधे फसलों एवं अन्य कृषि उत्पादनों में भी आता है। इसी प्रकार से कम समय में अधिक उत्पादन लेने के लिए ऑक्सीटोसीन हारमोन की अनियंत्रित उपयोग करने से भी भूमि की बंजरता बढ़ती है तथा इस प्रकार के रासायनिकों के कारण मानव स्वास्थ्य पर भी कुप्रभाव पड़ता है।

भारत के अनेकों कृषि उत्पादन क्षेत्रों में रसायनों एवं कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग से वहाँ की भूमि तो बंजर हो ही रही है साथ–साथ वहाँ कैंसर जैसे विनाशकारी रोग भी बढ़ते जा रहे हैं। कृषि की उपज अधिक लेने के लिए अनेक रसायन एवं पीड़कनाशी भूमि में डालते रहते हैं। इन रसायनों के कारण पक्षी एवं पशु भी मर जाते हैं।

भूमि के बंजर होने से रोकने के उपाय एवं कार्यक्रम

I. सरकारी प्रयास – भूमि के बंजर होने से बचाने के लिए भारत सरकार एवं राज्य सरकार सरकारी स्तर पर बंजर भूमि विकास कार्यक्रम (Waste Land Development Programs) चला रखा है। जिससे देश की जमीन पुनः हरीभरी हो सके, उपजाऊपन अधिक हो सके तथा कृषि प्रधान देश की गरीबी दूर हो सके। हमें गौरव करना चाहिए कि दुनिया में सबसे अधिक उपजाऊ भूमि भारत की है। कहने को तो चीन में कृषि योग्य भूमि अधिक है परन्तु उपजाऊपन में भारत की भूमि चीन से भी अधिक उपजाऊ है। परन्तु हमारे यहाँ तो रासायनिक खाद एवं पीड़कनाशी के कारण अधिक धोखा हुआ। यह एक मीठा जहर भूमि में डाल–डालकर उसे बंजर बना रहे हैं। भारत सरकार ने देश में निम्न प्रमुख योजनाएँ बनाकर बंजर भूमि विकास का कार्य आरंभ किया।

1. सूखा संभावित क्षेत्र (Drought Prone Area Program - DPAP) – भारत सरकार ने अपनी नौवीं योजना में बंजर भूमि के विकास के लिए सूखा संभावित क्षेत्र कार्यक्रम को शुरू किया। यह कार्यक्रम सन् 1973–74 में आरंभ हुआ। इस सूखा उन्मुख क्षेत्र कार्यक्रम के अन्तर्गत देश के 971 खण्डों में जिसमें 16 राज्य सम्मिलित थे इसमें पीड़ित क्षेत्र के आर्थिक विकास पर जोर दिया गया।

2. रेगिस्थान विकास कार्यक्रम (Desert Development Program - DDP) – 1977–78 में यह कार्यक्रम 7 राज्यों एवं 40 जिलों के 234 खण्डों में चला इसमें देश के 40 जिलों में जम्मू–कश्मीर और हिमाचल के ठण्डे जिले भी सम्मिलित थे। इसमें मिट्टी संरक्षण के साथ–साथ पौधे लगाकर रेगिस्थान को बढ़ने से रोकने के प्रयास किये गए।

3. समग्र बंजर भूमि विकास कार्यक्रम (Integrated Waste Land Development Program - IWDP) – सन् 1989–90 में समग्र बंजर भूमि विकास कार्यक्रम का आरंभ हुआ। इसके अन्तर्गत जहाँ–जहाँ बंजर भूमि है वहाँ के गरीब निवासियों के आर्थिक विकास पर जोर दिया गया।

4. तकनीकी विकास विस्तार एवं प्रशिक्षण (Technology Development Extension and Training - TDET) – सन् 1993–94 में तकनीकी विकास विस्तार एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम आरंभ किया गया। जिसमें बंजर भूमि विकास के लिए वैज्ञानिक तकनीक का विकास एवं विस्तार करके किसानों को बंजर भूमि में अधिक उपज के तरीके भी बताए।

5. इन्वेस्टमेंट प्रमोशन स्कीम (Investment Promotion Scheme - IPS) – इसके अन्तर्गत छोटे किसानों तथा एससी/एसटी के किसानों को कॉरपोरेट जगत से जुड़े व्यक्तियों के सहयोग से सहायता दी गई कि बंजर भूमि में किस प्रकार कृषि करें। उनको आर्थिक सहयोग भी दिया गया। लेकिन तकनीकी विकास विस्तार एवं प्रशिक्षण तथा इन्वेस्टमेंट प्रमोशन स्कीम कार्यक्रम छोटे क्षेत्र एवं छोटे किसानों तक ही सीमित रही अतः योजना सफल कम हो पाई।

6. नेशनल वाटरशेड डवलपमेंट प्रोजेक्ट फॉर रैनफेड एरिया (National Watershed Development Project for Rainfed

Area - NWDPRA) – नेशनल वाटरशेड डवलपमेंट प्रोजेक्ट फॉर रैनफेड एरिया कार्यक्रम 1990–91 में प्रारंभ किया गया। जिसके अन्तर्गत वर्षा क्षेत्रों में पानी को बचाकर कृषि करने के लिए सरकारी सहयोग दिया जाता था। ये कार्यक्रम हरित क्रान्ति (Green Revolution) के क्षेत्र में आए किसानों के लिए हितकारी रहा।

7. वर्षा जल संग्रहण विकास फण्ड (Rain Water Harvesting Development Fund) – सत्र 2000–01 में जहाँ–जहाँ वर्षा से खेती होती थी। उन क्षेत्रों में वर्षा जल संग्रहण के लिए केन्द्र सरकार ने वर्षा जल संग्रहण विकास फण्ड योजना चलाई। जिसमें 200 करोड़ का फण्ड नाबार्ड (National Bank for Agriculture and Rural Development - NABARD) द्वारा जारी किया गया। यह दो चरणों में चला। प्रथम चरण में छः राज्यों में आंध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, मध्यप्रदेश, उड़ीसा और उत्तरप्रदेश को सम्मिलित किया गया तथा दूसरे चरण में बिहार, केरल, राजस्थान, तमिलनाडु, जम्मू एवं कश्मीर, पश्चिम बंगाल, हिमाचल प्रदेश और हरियाणा को सम्मिलित किया गया। कुल मिलाकर संग्रहण विकास फण्ड द्वारा 14 राज्यों के 100 खण्डों में यह कार्यक्रम चला।

8. वाटरशेड डवलपमेंट प्रोग्राम इन शिफ्टिंग कल्टीवेशन एरिया (WDPSCA) – स्थानान्तरित कृषि को नियंत्रित करने के लिए केन्द्रीय कृषि मंत्रालय (Ministry of Agriculture) एवं भूमि संसाधन विभाग (Department of Land Resources या (DoLR) ने संयुक्त रूप से प्रयास करके पूर्वोत्तर क्षेत्रों में जिसमें सिक्किम भी था, में सफलता प्राप्त की। इन क्षेत्रों में पांचवी योजना में भी ऐसे कार्यक्रम आरंभ किये गए थे उनका नवीनीकरण 1994–95 में किया गया तथा इस कार्यक्रम को चालू किया गया। जिसमें झूमियाँ परिवारों को स्थाई रूप से कृषि करने के क्षेत्र बताए गए एवं उनको वहाँ बसाया गया।

9. समग्र जल संग्रहण प्रबन्धन (Integrated Watershed Management) – बाढ़ वाले क्षेत्रों में केन्द्र सरकार ने मृदा संरक्षण तथा समग्र जल संग्रहण प्रबंधन (Integrated Watershed Management) कार्यक्रम चलाकर मृदा की उत्पादन क्षमता बढ़ाकर कृषि के क्षेत्र में फसलों की उत्पादकता भी बढ़ाई गई। इससे बंजर भूमि की कमी का प्रयास किया गया।

10. पश्चिमी घाट विकास योजना (Western Ghat Development Project) – पश्चिमी घाट के पठार एवं अन्य पर्वतों के कमजोर पारिस्थितिकी तंत्र के विकास के लिए पश्चिमी घाट विकास योजना (Western Ghats Development Project - WGDP) तथा पर्वतीय क्षेत्र विकास परियोजना (Hill Area Development Project - HADP) के द्वारा पश्चिमी घाट के क्षेत्रों को एवं वहाँ के पर्यावरण को संरक्षित किये जाने का प्रयास किया।

दसवीं योजना में ऐसे बंजर भूमि विकास कार्यक्रम तथा वाटरशेड डवलपमेन्ट प्रोग्राम को 25 वर्षों तक जारी रखने का प्रस्ताव किया। यह प्रस्ताव फरवरी 1997 में लिया गया। इसमें वर्षा वाले क्षेत्रों में वर्षा जल संरक्षण एवं बंजर भूमि विकास कार्यक्रमों को आगामी 25 वर्षों तक सतत् रूप से चलाने एवं क्षेत्र में कृषि उत्पादकता बढ़ाने का कार्यक्रम जारी रखने का प्रस्ताव रहा। इसका उद्देश्य गरीबी दूर करने का भी रहा। इसके साथ–साथ इसका उद्देश्य रोजगार बढ़ाना भी हुआ। इन कार्यक्रमों से वनों के विकास एवं विस्तार को भी जोड़ा गया। इसके लिए वन कृषि (Farm forestry) एवं कृषि वानिकी (Agroforestry) पर भी जोर दिया जा रहा है। दसवीं योजना में 107 मिलियन हैक्टेयर बंजर भूमि को चिह्नित किया गया है जबकि नौवीं पंचवर्षीय योजना में मात्र 27.5 मिलियन हैक्टेयर भूमि का ही विकास संभव हुआ।

II. सामुदायिक प्रयास – देश में बंजर भूमि विकास एवं जल संग्रहण कार्यक्रम बिना जनता की भागीदारी के अधूरे रह सकते हैं। अतः इन कार्यक्रमों को एक नैतिक एवं राष्ट्रीय दायित्वों के साथ समझ कर प्रत्येक भारतीय नागरिक को इसमें सहयोग देना चाहिए। इसके लिए हम निम्न प्रयास कर सकते हैं –

1. वृक्षारोपण (Plantation) – सघन वृक्ष लगाने से बाढ़ को नियंत्रित करने में सहयोग हो सकता है तथा तेज हवाओं से उपजाऊ मृदा एक स्थान से दूसरे स्थानों पर उड़ जाती है, उसे भी रोका जा सकता है। पेड़ लगाने से वर्षा आती है जिससे सूखे को भी कम किया जा सकता है। अतः हमें अच्छी समझ से वृक्षारोपण एवं उसकी समुचित देखभाल, समय–समय पर पानी देकर वृक्ष वृद्धि बढ़ानी चाहिए। जहाँ पानी कम है, वहाँ कम पानी के क्षेत्र में उगने वाले पादपों को लगाना चाहिए।

वृक्ष लगाना वैसे भी प्रत्येक नागरिक का मूल दायित्व होना चाहिए। अपने जीवन में व्यक्ति जितने वृक्ष लगाकर उनको संरक्षित करता है उसे यह सोचना चाहिए कि उसने उतना ही श्रेष्ठ कर्तव्य पालन किया है।

2. वृक्षों एवं वनों को बचाकर – (By Saving trees and forest) – हमारे आसपास लगे हुए वृक्षों एवं वनों का संरक्षण करके, उनको समय–समय पर यदि आवश्यक हो तो सामूहिक प्रयास करके पानी भी पिलवाए तो यह एक बहुत अच्छा कार्य बंजर भूमि को बढ़ने से रोकने के लिए हो सकता है।

3. नई वाटिकाएं या नए बस्ती वन लगाकर (By growing new gardens and colony forest) – नए बस्ती वन एवं वाटिकाएं बनाकर उनका संरक्षण करके बंजर भूमि को बढ़ने से रोका जा सकता है। इसके लिए आवश्यक हो तो वनकर्मियों से सहयोग

लिया जाना चाहिए।

जैसे अनेक व्यक्ति मन्दिर निर्माण करवाते हैं अथवा कोई अपने पुरखों की याद में कोई भवन बनाता है या ओर कोई निर्माण करवाता है तो उसे समझाकर नया बगीचा या नया कोई स्मृति वन लगाने का आग्रह करना चाहिए।

4. कचरा डालने के स्थान को विकसित करके (By development of dumping place) – कचरा डालने का स्थान यथासंभव छोटा हो, चाहे उसे एक कचरा डालने का टैंक रूपी बनाया जा सकता है तथा वहाँ पर कचरे को भी अलग–अलग भागों में बांट कर उसका निस्तारण करना चाहिए। जैसे प्लास्टिक की थैलियाँ एवं प्लास्टिक के सामानों को अलग स्थान पर इकट्ठा करना चाहिए। कागज, कपड़े, कांच एवं जो शीघ्र ही नष्ट होने वाले हैं उनको अलग स्थान पर डाले, जैविक कचरा जैसे पेड़ों की पत्तियाँ, सब्जी के बचे भाग, रोटियाँ, फलों के बचे भागों को गाय या पशुओं के लिए अलग स्थान पर डालना चाहिए। बाकी अन्य प्रकार के कचरे को अलग से डालना चाहिए। अपनी बस्ती या गांव में कचरे के निस्तारण के लिए सभी में सोच नई डाले एवं समय–समय पर विद्वानों द्वारा गोष्ठी कराकर लोगों को कचरा निस्तारण के तरीके समझाए जाने चाहिए। अपने कार्यालयों एवं कर्मस्थली पर भी इसका ध्यान रखा जाना चाहिए।

प्लास्टिक की बनी थैलियों का उपयोग नहीं करना चाहिए। औद्योगिक कचरा भी ठीक से नियंत्रित तरीके से एक विशेष खण्ड में ही डालना चाहिए। औद्योगिक घरानों को इसकी विशेष चिंता करनी चाहिए।

5. रसायनों एवं कीटनाशकों का उपयोग न करके (No use of chemicals and pesticides) – अधिकतर कृषि भूमि का बंजर भूमि में बदलने का मुख्य कारण रसायनों एवं रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग करना है। अतः सभी सजग एवं पढ़े–लिखे नागरिक अपने आसपास के एवं जानकार किसानों को समझाने का प्रयास करें कि वो कृषि भूमि में रसायनों एवं खाद तथा रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग ना करें। इससे पशु–पक्षियों की भी सुरक्षा होगी तथा फसले भी अधिक गुणकारी मिलेगी।

6. जल संग्रहण करके (Water harvesting) – बाढ़ के क्षेत्रों में सामुदायिक एवं बस्ती के सहयोग से जल संग्रहण क्षेत्र बनाकर एवं किसान अपने–अपने खेत में यथासंभव जल संग्रहण का काम करके बाढ़ की गति को भविष्य में कम कर सकते हैं। अपने–अपने घरों, कार्यालयों, सामुदायिक भवनों में वर्षा जल का संग्रहण करके बाढ़ के खतरे को काफी हद तक कम कर सकते हैं। इससे पीने के पानी की समस्या का भी निदान हो सकता है। जहाँ पानी कम है वहाँ बूंद बूंद प्रणाली से सिंचाई करनी चाहिए। पानी का मितव्ययता से उपयोग करना चाहिए।

7. मृदा की जांच कराकर (By soil testing) – मृदा की समय–समय पर जांच करवाकर उसका आवश्यकतानुसार मृदा में अन्य खाद या पदार्थ या अन्य फसल उगाकर उसका उचित निराकरण या उपचार भी किया जा सकता है एवं भूमि को बंजर होने से बचाया जा सकता है। यदि भूमि लवणीय है तो उसका भी निदान वैज्ञानिक तरीके से होता है।

8. झूमिंग कृषि को बंद करके (By stopping jhuming cultivation) – पहाड़ी क्षेत्रों में झूमिंग खेती को पूर्णतया बंद करके भी भूमि को बंजर होने से बचाया जा सकता है। इसके लिए इच्छाशक्ति होना अनिवार्य है।

आपदाएं एवं उनका प्रबन्धन (Disasters and their Management)

पृथ्वी पर अनेक बार कुछ ऐसी घटनाएं घटती हैं जो विनाश करती है। ये घटनाएं आपदाएं कहलाती हैं। इनसे प्रकृति के जैविक घटक एवं अजैविक घटक दोनों प्रभावित होते हैं। लेकिन ज्यादा जैविक घटक प्रभावित होते हैं। ये घटनाएं इतनी ताकत से घटती है कि इनको रोकना एवं इनका सामना करना असंभव है।

ये आपदाएं दो प्रकार की संभव है–

I. प्राकृतिक आपदाएं (Natural Disasters)

II. मानवीय कृत आपदाएं (Human made Disasters)

I. प्राकृतिक आपदाएं (Natural Disasters)

1. भूकम्प (Earthquake)
2. भूस्खलन (Landslides)
3. अकाल (Drought)
4. बाढ़ (Flood)
5. आग (Fire)
6. ज्वालामुखी (Volcano)
7. चक्रवात (Cyclone)

II. मानव कृत आपदाएं (Human made Disasters)

1. **नाभिकीय दुर्घटनाएं (Nuclear accidents)**

I. प्राकृतिक आपदा (Natural Disaster)

प्रकृति में अनेकों घटनाएं घटती रहती हैं, कुछ तो हमें प्रसन्नता देने वाली एवं कुछ हमें दुःख दर्द देती हैं। जो दुःख दर्द देती हैं वे घटनाएं प्राकृतिक आपदाएं कहलाती हैं। प्राकृतिक आपदाएं सदैव प्रकृति में उथल–पुथल करती हैं। मानवीय शक्ति, वैज्ञानिक शक्ति सभी प्राकृतिक आपदाओं से संघर्ष करने में सक्षम

नहीं होती एवं मानव प्राकृतिक आपदाओं के समक्ष असहाय हो जाता है। ऐसी प्राकृतिक आपदाएं हैं जैसे भूकम्प, भूस्खलन, बाढ़, आग, अकाल, चक्रवात आदि।

भूकम्प
(Earthquake)

हमारी पृथ्वी का स्थलीय एवं समुद्रों का भी जो गर्तिय भाग है वे विशेष परतों के द्वारा निर्मित है। पृथ्वी की ये परतें कालान्तर में बनी। ठीक जैसे गरम दूध पर मलाई की परत जमती है, उसी प्रकार पृथ्वी के धरातल परन्तु इनमें भी कई अन्य परतें बनी। वैसे भूगोलवेत्ताओं के अनुसार पृथ्वी की अनेक परतें हैं।

इनकी एक विशेषता यह है कि इनमें प्रत्यास्थता का गुण होती है यानि ये ज्यादा कठोर नहीं होती इनमें ऊर्जा भी होती है। इसे प्रत्यास्थता तनाव ऊर्जा कहते हैं। ये भी कई प्रकार की हैं जैसे महाद्वीपीय परतें या प्लेटें, उपमहाद्वीपीय परतें या इनसे भी छोटी अन्य परतें। ये सभी तैरती हुई अवस्था में होती हैं। एक दूसरे के पास–पास स्थित परतें सामान्यतया एक–दूसरे से टकराती नहीं है परन्तु अनेक बार अनेकों कारणों से ये परस्पर टकराती है। इससे ऊर्जा मुक्त होती है वैसे जब ये परतें टकराती है तो इनमें दरारें भी पड़ती है, घर्षण भी होता है। दरारें पड़ने व घर्षण इत्यादि से ऊर्जा उत्पन्न होती है जो तरंगों में बदलकर भूकम्प का कारण बनती है। वैसे इस ऊर्जा का मात्र 10% भाग ही भूकम्प का कारण बनता है। इसमें से ज्यादा ऊर्जा तो भूखण्ड को तोड़ने में, उस स्थान का ताप बढ़ाने में ही खर्च हो जाती है। वैसे भूकम्प भूमि के अन्दर भारी मात्रा में गैस प्रवास, ज्वालामुखी, भूस्खलन या नाभिकीय परीक्षणों से भी होता है।

भूकम्प जहां से शुरू होता है वे मुख्य केन्द्र (Central point) या फोकस केन्द्र (Focus center) या हाइपो सेन्टर (Hypo center) तथा भूमि के ठीक ऊपर उपस्थित बिन्दु अधिकेन्द्र कहलाता है।

विज्ञान की वह शाखा जिसमें भूकम्पों का अध्ययन किया जाता है भूकम्प विज्ञान (Seismology) कहलाती हैं। भूकम्पों को पारम्परिक रूप से सीस्मोमीटर (Seismometer) से नापा जाता है। ये भूकम्प का क्षण परिमाण (Moment magnitude) के रूप में मापा जाता है। इसे रिक्टर (Richter) में मापा जाता है। यदि 3 या इससे कम रिक्टर का भूकम्प है तो वे इम्परसेप्टीबल (Imperceptible) या कम परिमाण का भूकम्प होता है। 3 से 7 रिक्टर तक का भूकम्प मध्यम प्रकार का तथा 7 से ज्यादा रिक्टर परिमाण का भूकम्प तेज भूकम्प कहलाता है। इससे पृथ्वी पर आए झटकों का परिमाप मरकेली स्केल (Mercalli scale) पर नापते हैं। भूकम्पों की भविष्यवाणी करना असंभव है।

उथले और गहरे केन्द्र का भूकम्प

सामान्यतया भूकम्प 10 कि.मी. तक की गहराई तक नहीं आता है। यह 70 कि.मी. की गहराई में शुरू होते हैं, जिनको छिछले केन्द्र के भूकम्प कहते हैं। 70 कि.मी. से 300 कि.मी. की गहराई वाले भूकम्प ''मध्य केन्द्रीय भूकम्प'' अथवा ''अन्तर मध्य केन्द्रीय भूकम्प'' कहलाते हैं। मध्य केन्द्र में पुरानी और ठण्डी परतें अन्य प्लेटों के नीचे खिसक जाती है जैसे टेक्टोनिक प्लेट। इससे भी 700 कि.मी. से नीचे जो कि सीस्मिक रूप से सक्रिय वाडाती बेनिऑफ क्षेत्र (Wadati-Benioff zone) है, वहां के भूकम्प गहरे केन्द्रीय भूकम्प (Deep focus earthquake) कहलाते हैं।

भूकम्प और ज्वालामुखी गतिविधि

भूकम्प अक्सर ज्वालामुखी क्षेत्रों में भी उत्पन्न होते हैं, यहां इनके दो कारण होते हैं टेक्टोनिक दोष तथा ज्वालामुखी में लावा (Magma) की गतियां, ऐसे भूकम्प ज्वालामुखी विस्फोट की पूर्व चेतावनी हो सकती है।

भूकम्प समूहों

एक क्रम में होने वाले अधिकांश भूकम्प, स्थान और समय के संदर्भ में एक–दूसरे से संबंधित हो सकते हैं।

भूकम्प तूफान

कई बार भूकम्पों की एक श्रृंखला भूकम्प तूफान (Earthquake storm) के रूप में उत्पन्न होती है। जहां भूकम्प समूह है, दोष उत्पन्न करता है। प्रत्येक झटके के तनाव का पुनर्वितरण होता है। ये बाद के झटके (After shock) के समान है लेकिन दोष का अणुगामी भाग है, ये तूफान कई वर्षों की अवधि में उत्पन्न होते हैं और कई बाद में आने वाले भूकम्प उतने ही क्षतिकारक होते हैं जितने कि पहले वाले। इस प्रकार का प्रतिरूप तुर्की में 10वीं सदी में देखा गया जहां लगभग एक दर्जन भूकम्पों के क्रम में उत्तर (Anatolian) दोष (North Anatolian Fault) पर प्रहार किया, इसे मध्य पूर्व में भूकम्प के बड़े, गुच्छों के रूप में माना जाता है।

भूकम्प के प्रभाव

1. झटके और भूमि का फटना – भूकम्प झटके और भूमि का फटना व अन्य कठोर संरचनाओं को कम या अधिक गंभीर नुकसान पहुंचाती है। स्थानीय प्रभाव की गंभीरता भूकम्प के परिणाम (Magnitude) के जटिल संयोजना पर भूकम्प केन्द्र (Epicenter) से दूरी पर और स्थानीय भूवैज्ञानिक व भूआकारिकीय स्थितियों पर निर्भर करती है। जो तरंग के प्रसार को कम या अधिक कर सकती है।

दोष सतह के किनारे पर भूमि की सतह का विस्थापन व भूमि का फटना दृश्य है, ये मुख्य भूकम्पों के मामलों में कुछ मीटर तक

हो सकता है। भूमि का फटना प्रमुख अभियांत्रिकी संरचनाओं जैसे बाधों (Dams), पुल (Bridges) और परमाणु शक्ति स्टेशनों (Nuclear power Stations) के लिए बहुत बड़ा जोखिम है।

2. भूस्खलन और हिम स्खलन – भूकम्प, भूस्खलन और हिमस्खलन पैदा कर सकता है, जो पहाड़ी और पर्वतीय इलाकों में क्षति का कारण हो सकता है।

एक भूकम्प के बाद किसी लाइन या विद्युत शक्ति के टूट जाने से आग लग सकती है। यदि जल का मुख्य स्रोत फट जाए या दबाव कम हो जाए तो एक बार आग शुरू हो जाने के बाद इसे फैलने से रोकना कठिन हो जाता है।

3. मिट्टी द्रवीकरण (Soil liquefaction) – मिट्टी द्रवीकरण तब होता है जब झटकों के कारण जल संतृप्त दानेदार पदार्थ अस्थायी रूप से अपनी क्षमता को खो देता है और ठोस से तरल में रूपान्तरित हो जाता है। मिट्टी द्रवीकरण कठोर संरचनाओं और पुलों को द्रवीभूत में झुका सकता है या डूबा सकता है।

4. सुनामी – समुद्र के भीतर भूकम्प के कारण हुए भूस्खलन में टकराने से सुनामी आ सकते हैं। उदाहरण – 2005 हिन्द महासागर में आए भूकम्प से सुनामी आई थी।

5. बाढ़ – यदि बांध क्षतिग्रस्त हो जाए तो बाढ़, भूकम्प का द्वितीयक प्रभाव हो सकता है। भूकम्प के कारण भूमि फिसल कर बांध की नदी में टकरा सकती है, जिसके कारण बांध टूट सकता है और बाढ़ आ सकती है।

6. मानव प्रभाव – भूकम्प रोग, मूलभूत आवश्यकताओं की कमी, जीवन की हानि, उच्च बीमा प्रीमियम, सामान्य सम्पत्ति की क्षति, सड़क और पुल का नुकसान और इमारतों को ध्वस्त होना या इमारतों के आधार का कमजोर हो जाना, इन सबका कारण हो सकता है, जो भविष्य में फिर से भूकम्प का कारण बनता है।

भूकम्प से बचाव के लिए तैयारियां

1. जब भूकम्प आए तो कम से कम नुकसान हो इसके लिए मकान एवं कार्यालयों को भूकम्परोधी तरीके से बनाया जाना चाहिए। एक मकान से दूसरे मकानों के बीच पर्याप्त दूरी भी हो जिससे एक मकान को यदि भूकम्प से नुकसान हो तो वे दूसरे मकान को नुकसान ना पहुंचा पाए। मकानों के पास पर्याप्त खुला स्थान भी होना चाहिए।
2. यदि भूकम्प आए तो मकानों के कोनों में जान बचाने के लिए छुपा जा सकता है।
3. भूकम्प आए तो बिना घबराए यथासंभव जितना जल्दी हो सुरक्षित स्थान की तरफ जाना चाहिए। दूसरे व्यक्तियों की भी सुरक्षा को देखते हुए उन्हें भी सुरक्षित स्थानों पर जाने के लिए कहना चाहिए।
4. अनेकों व्यक्ति भूकम्प से घबरा जाते हैं तो उन्हें संबल देना चाहिए।
5. यदि ऐसा लगे कि भूकम्प ज्यादा नुकसान देने वाला है तो बिना किसी की प्रतीक्षा के आत्मविश्वास रखकर स्वयं बचते हुए तुरंत दूसरों की सहायता में लग जाना चाहिए तथा फिर जितना संभव हो दूसरों का आत्मविश्वास जगाकर जो सक्षम लगे उसे भी दूसरों की सहायता के लिए प्रेरित करना चाहिए। घायलों का चिकित्सालय ले जाने की व्यवस्था करनी चाहिए।

भूकम्प एवं मान्यताएं

- भारतीय संस्कृति के अनुसार जब मानव जाति में दुष्कर्म अर्थात् पाप कर्म अधिक होने लग जाते हैं तो धरती पर भूकम्प आते हैं और नुकसान होता है। क्योंकि पाप से धरती पर वज़न अधिक होता है तथा धरती हिलती है जो भूकम्प होगा।
- नर्स मेथोलॉजी (ईसाई मान्यतानुसार) लोकी नामक अनिष्ट के देवता एवं सुन्दरता तथा प्रकाश के देवता बाल्डर (Balder) में अनबन हो गई। उनमें झगड़ा हुआ तथा देवता लोकी पकड़ा गया उसे एक विषैले सर्पों की गुफा में बन्द कर दिया और उसके सिर पर ये विषैले सर्प अपना विष गिराने लगे लेकिन उसकी पत्नी सिंगी एक कटोरी लेकर उस विष को इकट्ठा करने लगी तथा जब कटोरी भर जाती तो वे उसे खाली करने जाती तथा उस समयान्तराल में जब देवता लोकी पर विष गिरता तो वे उस विष से बचने के लिए अपना सिर हिलाता है तो भूकम्प आते हैं।
- ग्रीक की पुरानी मान्यताओं में एनाक्सागोरस (Anaxagoras) के अनुसार पृथ्वी में बनी गुफाओं में हवा के कारण भूकम्प आते हैं।
- थैलस ऑफ मिलेटस (Thales of Miletus) के अनुसार पानी एवं जमीन में परस्पर तनाव के कारण भूकम्प आते हैं।
- एनाक्सामीन्स (Anaxamines) के अनुसार पृथ्वी में सूखापन और गीलेपन के बीच तनाव से भूकम्पीय तरंगें पैदा होती हैं।
- डेमोक्राइट की मान्यतानुसार भूकम्प के लिए जिम्मेदार पानी है।
- प्लीनी द एल्डर (Pliny the Elder) की मान्यतानुसार भूकम्प धरती की अंदरूनी गूंज है। पुरानी ग्रीक मान्यतानुसार पोजिडन (Poseidon) भूकम्प का देवता है जब उसको क्रोध आता है तो वे भूकम्प पैदा करता है।
- जापानी मान्यतानुसार नमाज़ू (Namazu) नामंक एक मछली

को कासीमा नामंक देवता जब पत्थर मारता है तो भूकम्प आते हैं।

कुछ आधुनिक अवधारणा वाले कहते हैं कि प्रकृति से छेड़छाड़ से ग्लोबल वार्मिंग हुआ तथा ये भी भूकम्प की ताकत को बढ़ा रहा है।

भूस्खलन (Landslide)

भूस्खलन या Landslide या Landslip एक भूगर्भिक घटनाक्रम (Geological phenomenon) है। इसमें भूमि पर ऊंचाई से नीचे की तरफ भूमि को कोई बड़ा भाग नीचे खिसक या लुढ़क जाता है। जैसे पहाड़ों में ऊपर से नीचे की तरफ अनेकों बार भूमि का हिस्सा, चट्टानें और भी अनेकों वहां की रचनाएं खिसक जाती है या धंस जाती है। ये उस ऊंची या पर्वतीय संरचना के ढलान पर घटने वाली घटना है। ये भूस्खलन मिट्टी, पत्थर व चट्टानों द्वारा जल अवशोषण से भार बढ़ने से होता है। भूस्खलन भी अचानक घटने वाली घटना है जो अनेकों बार अधिक हानिकारक हो सकती है।

भूस्खलन के कारण

प्राकृतिक कारण

- पृथ्वी या भूमिगत जल का दबाव ढलान को अस्थिर कर देता है।
- ढलान पर उगे पादपों का नष्ट हो जाना (जैसे आग से) जिससे वहां की मिट्टी जो उन पादपों की जड़ों से जकड़ी रहती थी ढीली हो जाती है तथा भूस्खलन का कारण बनती है।
- अनेकों बार नदियों या समुद्री धाराओं से किसी ऊंचे स्थान के ढलान में कटाव हो जाता है तथा इससे भी भूस्खलन होता है।
- भूकम्पों से भी भूस्खलन होता है।
- बर्फ पिघलने से जो जल की धारा बनती है उससे भी ढलान में कटाव आ जाता है जो भूस्खलन का कारण बनता है।
- भूकम्प के कारण मिट्टी के कण तरल रूप में आ जाते हैं जिससे भी ढलान कमजोर हो जाती है तथा भूस्खलन हो जाता है।
- ज्वालामुखी के कारण भी भूस्खलन हो जाता है।
- तेज वर्षा के कारण भी भूस्खलन हो जाता है।

मानव की अनेक गतिविधियां भूस्खलन का कारण बनती है जैसे –

- विकास के नाम पर होने वाला वन विनाश भूस्खलन का कारण है।
- कृषि के लिए भी अनेक बार वनों को समाप्त कर दिया जाता है।
- उद्योगों एवं आवागमन के साधनों से उत्पन्न कम्पनों से भी भूस्खलन होता है।
- खनिजों के लिए खोदी गई खानों से भी ढलान में परिवर्तन आता है तथा वे भूस्खलन का कारण बन जाता है।
- निर्माण कार्यों, कृषि तथा वानिकी गतिविधियों से भूमि के जल की मात्रा में परिवर्तन आया है तथा ये भूस्खलन का कारण बनता है।
- अनेकों स्थान पर तो मानव ने अनेक छोटे–छोटे पहाड़ियों को 90% तक खोद लिया जो भी भूस्खलन का कारण बनता है।

भूस्खलन के प्रकार

मुख्यतया भूस्खलन दो प्रकार का होता है–

1. मलबा या कीचड़रूपी भूस्खलन (Debris flow or Mudflow) – जब किसी ढलान की मिट्टी में पानी अधिक हुआ तथा वहां मिट्टी कीचड़ के रूप में बन गई तो ऐसा होकर जो भूस्खलन होता है वे कीचड़ या मलबा रूपी कहलाता है। ऐसी स्थिति में पेड़, चट्टान राह में आने वाले भवन व अन्य भी इसके साथ तेजी से नीचे आ जाते हैं। ये काफी तेजी से या अधिक गति से होता है।
2. भूमि धंसन (Earth flow) – यह एक धीमी क्रिया है। इसमें भूमि की मुख्य मिट्टी और कंकड़, पत्थर ढलान से नीचे गिरने लगते हैं। इस अवस्था में पानी की सामान्य मात्रा होती है जिसमें मिट्टी, कंकड़, पत्थर लसलसे रूप में (Viscus) आ जाते हैं तथा फिर धीरे–धीरे ढलान से ऊपर से नीचे गिरने लगते हैं। इसके गिरने की गति तेज होती रहती है।

अनेकों बार भूस्खलन गतिशील रूप में भी होते हैं। ये छोटी ऊंचाई से भी दूर तक बहती अवस्था में भी हो सकते है। वैसे ये भूस्खलन बहुत धीमा होगा। इसे स्टर्जस्ट्रोम (Sturzstrom) कहते हैं।

अनेकों बार भूस्खलन कुछ डेसीमीटर से कुछ मीटर तक का ही होता है तथा बहुत धीमा होता है। ये सतही या छिछला भूस्खलन कहलाता है।

गहराई में भी अर्थात् पृथ्वी पर उगे पौधों की जड़ें जितनी गहराई होती है उतनी गहरी ज़मीन भी अन्दर से खिसक जाती है।

अनेकों बार समुद्र में भी भूस्खलन होता है। यदि समुद्रों में अधिक तीव्रता से भूस्खलन होता है तो समुद्र में तूफान या सुनामी आती है। अनेकों बार ज्वालामुखियों के कारण भी भूस्खलन होता है।

भूस्खलन के समय

- हमारे घरों के खिड़की दरवाजों के माप बदल जाते हैं। या उनकी चौखटें टेढ़ी–मेड़ी हो जाती हैं।
- पेड़ तिरछे हो जाते हैं।
- अनेकों बार बिजली के खंभे, टेलिफोन के टावर भी तिरछे हो जाते हैं।
- अनेकों बार ज़मीन में दरारें आ जाती हैं।

भूस्खलन होने पर

- अपना आत्मविश्वास ना खोए, स्वयं एवं अन्य आत्मविश्वासी व्यक्तियों के सहयोग से अन्य व्यक्तियों को वहां से सुरक्षित स्थान पर ले जाएं।
- प्रशासन को सूचित करें।
- आवश्यक सामानों को सुरक्षित स्थानों पर ले जाएं।
- पशु–पक्षियों को भी सुरक्षित स्थान पर ले जाएं।

कुछ ऐतिहासिक भूस्खलन

- द गोल्डाउ (Goldau) में 2 सितम्बर 1806 में हुआ।
- द कैप डैमन्ट क्यूबैक में 19 सितम्बर 1889 में।
- कनाडा के एल्बेरटा में फ्रेकस्लाइड जो टरटल पर्वत पर 29 अप्रेल 1903 में।

बाढ़
(Flood)

तेज वर्षा से बाढ़ आती है तो अनेक बार जल के विशाल बांध टूटने से भी बाढ़ आती है। अर्थात् वर्षा प्राकृतिक कारण है तो जलीय स्रोतों का टूटना अप्राकृतिक कारण अनियंत्रित तेज जल प्रवाह बाढ़ कहलाता है। ये ऐसी प्राकृतिक आपदा है जो प्रकृति में बहुत प्रलय मचाती है। मानव के अलावा ये पादपों एवं अन्य प्राणियों को भी समाप्त कर देती है। इसमें बड़े–बड़े निर्माण ध्वस्त हो जाते है तो अनेकों वन क्षेत्र तथा अन्य स्थल लुप्त हो जाते हैं। हजारों लाखों पशु–पक्षी तथा यहां तक कि जलीय जीव भी मर जाते हैं।

ये आपदा अनेकों बार 5–6 घण्टों की मूसलाधार वर्षा से भी सम्भव है तथा किसी को बचने का भी समय नहीं मिल पाता है। यदि कोई स्थल है जहां बाढ़ आती है तो वहां भूस्खलन का भी संकट रहता है तथा इससे दोहरी प्राकृतिक आपदा हो जाती है। बाढ़ सभी प्रकार के सम्पर्कों को तोड़ देती है चाहे वे आवागमन के मार्गों का सम्पर्क हो, विद्युत सम्पर्क हो, सूचना के सम्पर्क हो सभी टूट जाते हैं यहां तक कि अनेकों बार तो हवाई यात्राएं भी नहीं हो सकती। यहां तक कि अनेकों बार तो लोगों के निवास स्थान भी बह जाते हैं।

बाढ़ के बाद भी उसका प्रभाव कम नहीं होता वहां महामारी फैलने की आशंका बन जाती है। सब तरफ मृत शरीरों का दृश्य दिखने लग जाता है। वहां पुनः स्थिति सामान्य होने में कई महीनों या कभी तो कई वर्षों लग जाते हैं।

बाढ़ से अनेकों बार तो पूरे–पूरे गांव, कस्बे यहां तक कि शहरों का अस्तित्व नष्ट हो जाता है। आधुनिक युग में भी जहां मानवीय सभ्यता साधन सम्पन्न है बाढ़ में चाह कर भी साधनों का उपयोग करके भी वह सहायता नहीं कर सकता सिर्फ मूक दर्शक बन जाता है। जहां ऊंची–ऊंची वैभवशाली बस्तियां होती हैं बाढ़ के बाद वहां खड्डों में भरा कीचड़ और मृत शरीरों का अम्बार दिखता है। इससे उपजाऊ मिट्टी भी कम होती है क्योंकि उपजाऊ मिट्टी जो ऊपरी परत होगी वह बह जाती है। विश्व में अनेकों समय बड़ी–बड़ी बाढ़ें आई जिससे पूरा विश्व हिल गया।

विश्व में उल्लेखनीय बाढ़ों में –

- चीन की पीली नदी या ह्वागही नदी में सामान्यतया बाढ़ आती रहती है। 1931 में आई भीषण बाढ़ में अनेक मौतें हुई।
- 1983 में अमेरिका की भीषण बाढ़ अब तक की आर्थिक रूप से नुकसान करने वाली सबसे भीषण बाढ़ थी।
- 1998 की याग जी नदी (चीन) की बाढ़ ने 1 करोड़ 40 लाख लोग बेघर हुए।
- 2000 में मोजाम्बिक में बाढ़ आई तो तीन हफ्तों तक देश को ढका रखा। लाखों लोग मारे गए।
- 2013 में 21 जून से 24 जून 2013 तक उत्तराखण्ड में केदारनाथ की भारी बाढ़ में 8 लाख से 15 लाख लोग मारे गए। अनेकों कस्बों एवं गांवों का अस्तित्व मिटा गया।
- 2015 में भारत के जम्मू कश्मीर में बाढ़ आई। हजारों व्यक्ति प्रभावित हुए।

बाढ़ के समय क्या करें

- बाढ़ के समय आत्मविश्वास एवं मानसिक स्थिति सकारात्मक रखें तथा अतिशीघ्र सुरक्षित स्थान की ओर निकले एवं अन्य साथियों को भी ले जाएं।
- रस्सी, हथौड़ी, टार्च की व्यवस्था करके बचाव कार्यों में लगे एवं व्यक्तियों को सुरक्षित स्थानों पर ले जाएं।
- चिकित्सा व खाद्य सामग्री की भी उचित व्यवस्था करें।
- तैरना जानने वालों की सहायता लेकर कार्य को आगे बढ़ाते रहे।
- बच्चों एवं महिलाओं को भी प्राथमिकता के आधार पर सुरक्षित स्थानों पर ले जाएं।
- संभव हो तो पशु एवं अन्य जीवों को भी सुरक्षित निकालने की

व्यवस्था करें।

- विद्युत वितरण व्यवस्था यथासंभव बंद करा देवें, संचार व्यवस्था का ठीक से उपयोग कर सकते है तो अच्छा रहता है जैसे चल दूरभाष यंत्र (मोबाइल) से फंसे व्यक्तियों की जानकारी लेकर उनका आत्मविश्वास बढ़ा सकते हैं तथा उनको बचने के निर्देश भी दिए जा सकते हैं जैसे कि उनसे कहे कि किसी ऊंचे स्थान पर जाए।
- रस्सियों एवं लकड़ियों से भी पुलिया बनाई जा सकती है जो उचित स्थान पर बनाकर लोगों को बचाने में एक अच्छा साधन बन सकती है। अंधेरा होने पर टॉर्च का उपयोग कर सकते हैं।
- हथौड़े से सुरक्षित रास्ता बनाने के लिए छोटी–मोटी दीवार या बाधा तोड़ी जा सकती है।
- तुरन्त चिकित्सा व्यवस्था भी कराई जा सके ऐसी भी व्यवस्था हो।

सुनामी (Tsumani)

सुनामी जापानी शब्द है जिसका अर्थ है ''बंदरगाह की निकटवर्ती लहर'' समुद्र में यदि भूकम्प आए या भूस्खलन हो या ज्वालामुखी मानवीयकृत परमाणु बम परीक्षण हो उनसे एक तूफान या चक्रवात उठता है जिसे सुनामी (Tsumani) कहते हैं। सुनामी से समुद्री वनस्पति एवं प्राणियों को तो मृत्यु मिलती ही समुद्र के पास, अनेकों बार तो दूर–दूर तक प्रलय मिलता है।

समुद्र सतह के समानान्तर लहरें आती हैं 17 मीटर तक ऊंची हो सकती है तथा इससे अचानक तूफान आता है जो भारी प्रलयकारी हो सकता है। इसमें अनेकों समुद्री टापूओं, अनेक समुद्री किनारे बसे नगरों के अस्तित्व का संकट हो जाता है। लाखों जीव–जन्तु मृत्यु को प्राप्त होते हैं। आर्थिक संकट भी हो जाता है एवं ये भी किसी को बचने एवं सहयोग करने का अवसर नहीं देती है। इससे अन्य संकट भी उत्पन्न हो सकते हैं जैसे जापान में सुनामी आई वहां परमाणु बिजलीघर नष्ट हुआ जिससे विकिरण की सुनामी ओर आ गई जो पूरी विश्व के लिए चिन्ता का विषय भी बनी।

सुनामी से जब टापूओं या तटीय क्षेत्रों में जब समुद्र के समानान्तर ऊंची लहरें उठती है तो आस–पास की उपजाऊ मिट्टी भी बह जाती है तथा वहां वन क्षेत्र पुनः लगने या कृषि करने में भी समस्या आती है। अनेकों बार तो वहां कई–कई महीनों कीचड़ बन जाता है तथा चारों तरफ बदबू भी आने लग जाती है जो महामारी का कारण हो सकता है।

ज्वारभाटा एवं सुनामी की लहरों में अंतर होता है। ज्वारभाटा की लहरें चन्द्रमा की गुरुत्वाकर्षण शक्ति से आती है जो प्रायः छोटी–छोटी लहरें होती हैं। सुनामी की लहरों समुद्र में आए ज्वालामुखी अथवा भूकम्प या अन्य समुद्री भूमि की हलचल के कारण उठती है जो अनेकों किलोमीटर चौड़ी एवं सैकड़ों किलोमीटर लम्बी होती है ये अनेक बार 17 से 20 मीटर ऊंची हो सकती है या समुद्र के समानान्तर उठती है। मानो समुद्र के आसमान में एक नया समुद्र का भाग हो गया हो। जब ये तट पर टकराती है तो प्रलयकारी प्रभाव दिखाती है। इसके लिए आवश्यक है कि भूकम्प या भू हलचलों का केन्द्र समुद्र हो। इसमें समुद्र तल से कोई गैस का रिसाव तेजी से होता है तो भी वहां सुनामी आ सकती है। जैसे 1953 में अलास्का में व 2004 में हिन्द महासागर में सुनामी आई। भूकम्प की तरह इसका भी पूर्वानुमान लगाना असंभव है।

सुनामी के कुप्रभावों से बचने के लिए पूर्व में की गई तैयारियां कुछ सीमा तक बचाव का कारण हो सकती है जैसे –

- तटों पर वृक्षों को लगाना।
- सुरक्षित स्थानों पर ही व्यापारिक एवं अन्य प्रतिष्ठान खोलना।
- सुरक्षित स्थानों पर ही बस्तियां बसाना यदि पूर्व में बस्तियां बसी हुई है तो तटों पर वैकल्पिक सुरक्षा की व्यवस्था करना जैसे ऊंची–ऊंची तटीय दीवारें बनाना, आसपास की बस्तियों को सुरक्षित स्थानों पर पुनर्वास करना।
- सूचना तकनीक के उपयोग में विकास कर आशंका होने पर सतर्कतापूर्वक स्थान खाली करना।
- अनुभवों का उपयोग करके भविष्य की योजना बनाकर सुनामी के प्रभावों से भविष्य में बचा जा सकता है।

आग (Fire)

आग वैसे तो मानव विकास में एक महत्वपूर्ण योगदान देती है तथा महत्वपूर्ण खोज भी मानी जाती है। परन्तु यही आग जब अनियंत्रित हो जाती है तो हानिकर हो जाती है। वनस्पति एवं प्राणियों के साथ मानव की मृत्यु का कारण बन जाती है। इससे आर्थिक घाटा भी होता है तो यह पर्यावरण को भी घाटा पहुंचा देती है।

आग प्राकृतिक तथा मानवीय या तकनीकी भूल से लग जाती है। प्राकृतिक कारणों में तो बिजली गिरना (Lightning) तथा सूखा (Drought) के कारण जंगल की आग (Wild fire) लग जाती है तथा यह सबसे भयावह आग हो सकती है। इससे वनक्षेत्र नष्ट हो जाते हैं। वहां के निवासी जंगली जानवर तथा निवासी मानव भी नष्ट हो जाते हैं तथा वनस्पति भी पूर्ण नष्ट हो जाती है। ये अनेकों दिनों तक लगती रहती है। इसका फैलाव नगर एवं शहरों तक भी हो सकता है।

सूखा प्राकृतिक आग लगने का दूसरा कारण हो सकता है।

इसमें जब कुछ वनस्पति जैसे घास कुल के पौधे तथा बांस सूख जाते हैं तथा किसी कारण एक पौधा या एक बांस (Bamboo) दूसरे बांस से रगड़ खाते हैं तो आग लग जाती है जो भयावह स्थिति बन जाती है। ऐसा खेतों में भी संभव है। मानवीय भूल में मानव की छोटी सी गलती आग का कारण हो जाती है जैसे मानव बीड़ी–सिगरेट पीने के लिए आग लगाता है तथा उस आग लगाने वाली तिली को सुरक्षित स्थान पर ना फेंक वे चारे में या अन्य आग पकड़ सकने वाले पदार्थ के पास जैसे कपड़ा, कागज, डीजल, पेट्रोल या अन्य पदार्थ के पास फेंक देता है तो आग लग जाती है। अनेकों बार वाहनों के दुर्घटनाग्रस्त होने से भी आग लग जाती है। अनेकों बार मानव खेती करने के लिए वन क्षेत्रों में आग लगाता है जो अनियंत्रित होकर दावानल के रूप में परिवर्तित हो जाती है।

अनेक बार मानव कचरा जलाने को आग लगाता है तो भी वे बड़ी आग का रूप ले लेती है। खाना बनाने के लिए लगी आग भी भयंकर रूप में आ जाती है। अनेकों बार दंगा करने वाले लोग भी आग लगाते हैं जिससे अनेकों वाहन, दुकानें, बाजार, खेत–खलिहान वनक्षेत्र तथा उद्योगों को नुकसान होता है।

तकनीकी खराबी में विद्युत वितरण के तारों में आग लग जाती है तथा भयावह रूप में आ जाती है तो अनेक बार मशीनों में घर्षण की अधिकता से आग लग जाती है तो अनेक बार गैस सिलेण्डर के रिसाव से आग लग जाती है, अनेकों बार डीजल, पेट्रोल के या केरोसीन के भण्डारों के पास अधिक मोबाइल के उपयोग या अन्य मशीनों या तकनीकी उपकरणों के द्वारा भी आग लग सकती है। प्लास्टिक की बनी वस्तुएं भी छोटी सी त्रुटि के कारण आग पकड़ सकती है। एल्कोहल या उसके उत्पाद भी छोटी सी त्रुटि के कारण जैसे विद्युत स्पार्किंग से आग पकड़ सकते हैं। विशेष रूप से उद्योगों में लगी आग से आर्थिक नुकसान अधिक होता है। आग से जान–माल की हानि हो जाती है। जिसकी पूर्ति करना असंभव हो सकता है।

बचाव के उपाय

- बीड़ी, सिगरेट की आदत कम करके या छोड़कर भी आग लगने से बचाया जा सकता है।
- यदि बीड़ी, सिगरेट या अन्य धूम्रपान करते है तो तिली सुरक्षित रूप से फेंके तथा बीड़ी, सिगरेट का पूरा बंद करके या बुझा के सुरक्षित स्थान पर फेंके।
- यदि कचरा जलाए तो सावधानीपूर्वक जलाएं। बच्चों से कचरा जलाने को ना कहे।
- बिजली के तार अच्छी तरह लगवाए तथा अच्छी तकनीक से बने तारों का उपयोग करें। सभी प्रकार के तारों पर प्लास्टिक या रबर की परत होनी चाहिए।
- कटे–फटे बिजली के तार तुरन्त बदल देने चाहिए।
- वनों में आग ना लग सके इसके लिए वन विभाग के कर्मचारियों को नियमित निगरानी रखनी चाहिए तथा आग से बचने के लिए आवश्यक निर्देशों का स्वयं भी पालन करे तथा वन भ्रमण करने आए पर्यटक या अन्य को भी करने की अपील करनी चाहिए।
- सड़क एवं अन्य आवागमन के मार्गों पर आग से बचने के निर्देशों का भी लिखकर लगाने चाहिए तथा मीडिया एवं अन्य माध्यमों में प्रचार–प्रसार करना चाहिए।
- सभी संभावित क्षेत्रों एवं स्थानों पर अग्निशमन यंत्र होने चाहिए।
- वन सूख रहे तो वहां पर उचित कार्यवाही करके आग से बचने का प्रयास करें। वन्य प्राणियों को विशेष सुरक्षा दे या संभावना होने पर वन्यजीवों का अन्य स्थान पर स्थानान्तरित भी किया जा सकता है।
- आग से बचने के लिए उद्योगों, कार्यालयों, निकायों, स्कूलों, चिकित्सालयों तथा महाविद्यालयों में समुचित व्यवस्था एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम समय–समय पर होते रहने चाहिए।
- डीजल, पेट्रोल, केरोसीन, गैस, प्लास्टिक सामानों के भण्डार बस्ती से दूर सुरक्षित स्थानों पर हो तथा आग लगने पर बुझाने की समुचित व्यवस्था हो। वहां एक अग्निशमन वाहन की वैकल्पिक व्यवस्था तो सदैव रहनी ही चाहिए। पेट्रोल या डीजल, केरोसीन में लगी आग मिट्टी से भी बुझ सकती है तो वहां पर मिट्टी की भरी एक बाल्टियों की व्यवस्था होनी चाहिए।
- कार्यालयों एवं विद्यालयों में प्रवेश एवं निकास की व्यवस्थाएं तथा प्रत्येक कमरे में खिड़की दरवाजे समुचित व्यवस्था में होने चाहिए।

ज्वालामुखी (Volcano)

मानव ने प्रकृति के सामने अपनी अनेकों प्रकार की शक्तियों का प्रदर्शन किया होगा परन्तु प्रकृति की प्रचण्ड शक्ति के सामने मानव की हर शक्ति बौनी हो जाती है। इसी प्रकार की प्राकृतिक शक्ति का रूप है ज्वालामुखी।

ज्वालामुखी पृथ्वी के आन्तरिक गर्म भाग से तेज तापमान के साथ भाप, लावा, धुंआ, पिघली अवस्था में चट्टानें एक दरार से तेज गति के साथ बाहर निकलती है। प्रारंभ में ये एक छोटे कोन जैसी संरचना से निकलता है परन्तु धीरे–धीरे ये एक पर्वताकार रूप में बदल जाती है तथा इससे निकले ये लावा, धुंआ, वाष्प आदि ठण्डे होते रहते हैं एवं पहाड़ों में बदलते रहते हैं।

पृथ्वी के अन्दर गर्म भाग है अनेकों बार समुद्री पानी या अन्य

स्रोत का पानी जब किसी तरीके से गर्म भाग तक पहुंचता है तो पानी वाष्प रूप में आता है तथा जब पृथ्वी की सतह पर दाब कम होता हो भूमि की परत कमजोर होती है तो वह वाष्प एक दरार या छिद्र के द्वारा बाहर आ जाती है तथा साथ में लावा, धुआं और पिघली अवस्था में बाहर निकलता है। छिद्र ज्वालामुखी छिद्र (Volcanic pore) कहलाता है। अनेकों बार पृथ्वी में छिपी गैस का रिसाव भी ज्वालामुखी से होता है।

ज्वालामुखी तीन प्रकार के होते हैं–

1. सक्रिय ज्वालामुखी (Active volcano)
2. प्रसुप्त ज्वालामुखी (Dormant volcano) तथा
3. शान्त ज्वालामुखी (Extinct volcano)

1. सक्रिय ज्वालामुखी – ऐसे ज्वालामुखी जो सदैव लावा एवं धुआं निकालते रहते हैं।

2. प्रसुप्त ज्वालामुखी – ऐसे ज्वालामुखी जिनसे कभी–कभी कुछ लावा, धुआं एवं राख निकलते रहते हैं। वे प्रसुप्त ज्वालामुखी कहलाता है।

3. शान्त ज्वालामुखी – ये ज्वालामुखी पूर्व में सक्रिय थे परन्तु कई वर्षों से इनमें से ना तो लावा निकलता है और ना ही राख, धुआं आदि। भविष्य में भी कम संभावना होती है कि ये सक्रिय हो तो इसे शान्त ज्वालामुखी कहते हैं।

जब ज्वालामुखी सक्रिय होते हैं तो इनसे तेज गति से लावा, धुआं, राख इतना निकलता है कि अनेक कि.मी. वर्ग क्षेत्र में ये फैल जाता है तथा वहां जीवन दूभर कर देता है। अनेक बार तो जान–माल का नुकसान हो जाता है। अनेको जंगली पशु–पक्षी यहां तक कि पालतु पशु–पक्षी भी मारे जाते हैं। अनेक बार मानव भी इसमें मारा जाता है। इनकी क्षमता के आधार पर हवाई, स्ट्रम्बोली, वल्कोनी, पिलियल तथा विसूवियस तुल्य ज्वालामुखी।

संसार में अधिकांश ज्वालामुखी दो प्रधान मेखलाओं में पाये जाते हैं – 1. परिप्रशान्त मेखला एवं 2. मध्य महाद्वीपीय मेखला।

1. परिप्रशान्त मेखला के ज्वालामुखी – संसार में अधिकांश ज्वालामुखी प्रशान्त महासागर के किनारे–किनारे पाये जाते हैं। ये परिप्रशान्त मेखला वाले ज्वालामुखी होते हैं।

2. मध्य महाद्वीपीय मेखला के ज्वालामुखी – ये ज्वालामुखी पश्चिम में आइसलैण्ड से लेकर पूर्वी म्यांमार तक पाये जाते हैं। ये अल्पाइन पर्तों के सहारे फैली हुई पट्टी है। इसके अतिरिक्त अंधमहासागर के मध्यवर्ती कटक और पूर्वी अफ्रीका की दरार घाटी के सहारे भी ज्वालामुखी पाये जाते हैं।

ज्वालामुखी विस्फोट के साथ फटते है तो साथ–साथ भूकम्प भी आते हैं। इससे सल्फरडाईऑक्साइड, हाइड्रोजन क्लोराइड जैसी गैसों का रिसाव भी होता है। इनमें हाइड्रोजन–डाई–ऑक्साइड और कार्बन डाईऑक्साइड अति दुखदायी होती है। ये वातावरण को प्रदूषित करती है। ज्वालामुखी से खनिज पदार्थ भी निकलते हैं। इनसे काली, पीली, लाल मिट्टी भी निकलती है।

अमेरिका के एडिस पर्वतमाला को ज्वालामुखी पर्वतमाला श्रेणी का पर्वत माना गया है। ये काली मिट्टी से बने तटों के लिए प्रसिद्ध है। ये तट ज्वालामुखी से निकले खनिज ही है। ज्वालामुखी पृथ्वी की गहराई ये छिपे खनिजों को बाहर लाता है। अभी भी पृथ्वी पर 1500 सक्रिय ज्वालामुखी है।

ज्वालामुखी पर्वत दो प्रकार के हैं – 1. जीवित ज्वालामुखी पर्वत जैसे माउण्ट एटना 2. मृत ज्वालामुखी पर्वत जैसे हमारा हिमालय। इसलिए हमें इससे कोई संकट नहीं है। मगर माउण्ट एटना जो कि जीवित ज्वालामुखी पर्वत है जिनसे समय–समय पर लावा निकलता है। एशिया के इण्डोनेशिया में सबसे अधिक ज्वालामुखी है। ज्वालामुखी महासागरों में भी होते हैं। समुद्र में 10000 (दस हजार) ज्वालामुखी मौजूद है। ये सुनामी का कारण बनते हैं। अनेकों ज्वालामुखी आज भी वैज्ञानिकों की दृष्टि से बचे हुए हैं।

इण्डोनेशिया समेत अनेक देशों में आई सुनामी का कारण ज्वालामुखी (समुद्री ज्वालामुखी) था। सबसे बड़ा ज्वालामुखी (समुद्री) हवाई द्वीप में है। इसका नाम मोनालो है। ये करीब 13000 फीट ऊंचा है। यदि इसे समुद्र से निकाला जाए तो ये 29000 फीट का हो जाए। जो माउण्ट एवरेस्ट से भी ऊंचा हो जाए। इसके बाद सिसली के माउण्ट एटना का नाम आता है ये संसार का सबसे पुराना ज्वालामुखी है। ये 3500 वर्ष पुराना है। एक ज्वालामुखी है स्ट्रोमबोली इसे लाइट हाउस ऑफ मेडिटेरियन कहा जाता है क्योंकि यह हर समय लावा निकालता रहता है।

ज्वालामुखी एवं तबाही

ज्वालामुखी प्रारंभिक समये से ही पेड़–पौधों एवं प्राणियों के लिए हानिकारक रहे हैं। इनसे सैकड़ों वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में पादप प्राणी मारे जाते हैं।

ज्वालामुखी से होने वाली तबाही का इतिहास काफी पुराना है। 1994 में मरपी नामक ज्वालामुखी फटने से हजारों लोगों की जान गई थी। मरपी का अर्थ है – माउण्ट ऑफ फायर। अकेले अमेरिका के 48 राज्यों में करीब 40 से अधिक जीवित ज्वालामुखी मौजूद हैं। इन आग बरसाते पर्वतों में अमेरिका का रैनियर प्रमुख है। इसके फटने का अभी तक कोई इतिहास नहीं है। मगर इसके बावजूद यहां से काफी समय से जहरीला धुआं और गैस बाहर आ रही है। इसलिए यह कभी भी खतरनाक साबित हो सकता है। 1984 में कोलम्बिया में ज्वालामुखी के फटने से ही करीबन 25,000

से अधिक की जानें गई थी। ऐसा ही हादसा 1814 में इण्डोनेशिया में हुआ जिसमें करीब 50,000 लोगों ने अपनी जान गंवाई थी। अमेरिका में माउण्ट लेन के फटने से भी ऐसा ही हादसा पेश आया था। आज भी पृथ्वी पर कहीं कोई ना कोई ज्वालामुखी अपने होने का आभास कराता रहता है।

पृथ्वी पर उपस्थित ज्वालामुखी अधिकतर दस हजार वर्षों से लेकर एक लाख वर्ष पुराने हैं। ज्वालामुखी से अनेक बार विषैली गैसों का भी रिसाव होता है जो लोगों एवं पादप प्राणियों सबके लिए घातक होती है।

चक्रवात (Cyclone)

प्रकृति में अनेकों प्रकार की घटनाएं घटती रहती हैं। कभी भूकम्प तो कभी ठण्डी बर्फ गिरना तथा कभी गर्मी आना। इनमें से एक घटना है चक्रवात।

चक्रवात एक ऐसा बंद परिपत्र है जिसका तरल पदार्थ पृथ्वी के समान एक ही दिशा में चक्कर लगाता रहता है। इसमें आमतौर पर हवा सर्पिल आकार में पृथ्वी के उत्तरी गोलार्द्ध में दक्षिणावर्त और दक्षिणी गोलार्द्ध में वामावर्त रूप में घूमती है।

बड़े चक्रवात वाले परिसंचरण लगभग हमेशा कम वायुमण्डलीय दबाव के क्षेत्रों पर केन्द्रित रहते हैं। सबसे बड़ी कम दबाव वाली प्रणालियां कोर ध्रुवीय चक्रवात और अतिरिक्त उष्ण कटिबंधीय चक्रवात कहलाती है जो साइनोपटिक पैमाने पर रहती है। गर्म सत् चक्रवात जैसे उष्ण कटिबंधीय चक्रवात मेसोसैक्लोनेस और ध्रुवीत कम छोटे मेसोस्केल के भीतर रहती है। कटिबंधीय चक्रवात मध्यवर्ती आकार के होते हैं। ये चक्रवात पृथ्वी के बाहर अन्य कारण से होता है। बड़े चक्रवात वाले परिसंचरण लगभग हमेशा कम वायुमण्डलीय दबाव के क्षेत्रों पर केन्द्रित रहते हैं।

साइक्लोजेनीसिस चक्रवात गठन और उत्कटता की प्रक्रिया के बारे में बताते है। चक्रवाती अंश अतिरिक्त उष्ण कटिबंधीय चक्रवात बड़े अक्षांशों वाले तापमान पर तरंगों का रूप धारण करते है जिन्हें बरोक्लिनिक क्षेत्र कहा जाता है। यही क्षेत्र संकुचित होकर जब चक्रवातीय परिसंचरण में बन्द होते है या उग्र रूप धारण कर लेते हैं तब वातावरण चक्रवात आता है। कच्चे घरों एवं झोंपड़ियों के छत्त–छप्पड़ उखड़ जाते हैं। भारत में अंधड़/झक्कड़ आना एक आम बात है। मई एवं जून के महीने में यह अक्सर आते हैं। आंधी की अपनी लाभ एवं हानियां होती हैं।

राजस्थान एक रेगिस्तान है इसके रेतीले मैदान मीलों फैले हैं। इसमें भी अंधड़ आते हैं तो कभी काली–पीली आंधी। राजस्थान में मान्यता है कि जितनी आंधियां आएगी उतनी बारिश भी आएगी। मौसम अलग घनत्व वाली हवाओं के दो भागों को अलग करता है और मौसाभिक घटना में चक्रवात सबसे प्रमुख होता है। हवा के अंश आमतौर पर गंभीर मौसम में तूफान की संकीर्ण पट्टियों के रूप में, कभी–कभी प्रचण्ड रेखाओं के रूप में तो कभी सूखी रेखाओं के रूप में दिखाई देती है, वे पश्चिम में संचलन केन्द्र बनाती है और चक्रवात केन्द्र के पूर्व में रहती है और अधिकतर स्ट्रेटफार्म के रूप में दिखाई देती है। ये चक्रवातीय पथ में ध्रुव की ओर बढ़ती रहती है। बंद केन्द्र चक्रवातीय जीवन चक्र में देर से प्रवेश करते हैं और तूफानी केन्द्र को लपेट लेते हैं। उष्णकटिबंधीय चक्रवाती अंश उष्णकटिबंधीय चक्रवातों के विकास की प्रक्रिया का वर्णन करता है उष्णकटिबंधीय चक्रवात सार्थक आंधियों की अव्यक्त गर्मी के कारण संचालित होती है।

ब. मानवीय कृत आपदा (Human Mad Disasters)

मानव प्रकृति का एक घटक है एवं सबसे अधिक विकसित प्राणी है। ये अपने स्वार्थ सिद्धि के लिए अनेक बार प्रकृति में आपदाएं भी उत्पन्न कर सकता है जैसे युद्ध जैसी आपदा। युद्ध में रासायनिक एवं परमाणवीय शक्ति का प्रदर्शन कर प्रकृति में एक बड़ी आपदा उत्पन्न करता आया है। परमाणवीय आपदा उसकी जाने–अनजाने में होने वाली सबसे बड़ी मानवीय आपदा है।

नाभिकीय दुर्घटना (Nuclear Accidents)

मानव द्वारा खोजी गई सबसे महत्वपूर्ण एवं विनाशकारी खोज नाभिकीय ऊर्जा (Nuclear energy) है। ये जितनी विकास में सहयोगी है उतनी ही विनाश में भी। दुनिया में सबसे अधिक शक्ति सम्पन्न राष्ट्र वही है जिसके पास नाभिकीय ऊर्जा का ज्ञान एवं नाभिकीय ऊर्जा के स्रोत तथा साधन है।

प्रकृति में सौ से अधिक तत्व उपस्थित है इनमें से अनेक तत्व स्वतः ही विकसित होते रहते हैं अर्थात् से बड़े नाभिक वाले, अधिक परमाणु भार वाले तत्व होते हैं जिनके नाभिक टूटते रहते हैं तथा विशेष ऊर्जा को उत्सर्जित करते रहते हैं। इनसे नये छोटे तत्वों का निर्माण भी होता रहता है। ऐसे तत्व रेडियोएक्टिव तत्व (Radioactive element) कहलाते हैं। ये तत्व प्रकृति में पाये जाते हैं लेकिन शुद्ध रूप में लाने के लिए विशेष प्रकार का प्रक्रम अपनाना होता है। जिसकी तकनीकें बहुत कम देशों के पास है।

जब रेडियोएक्टिव तत्वों को शुद्ध रूप में लाते हैं तो इनको विशेष रूप की तकनीकों द्वारा तथा विशेष पात्रों में रखना पड़ता है। शुद्ध रेडियोएक्टिव तत्वों के परमाणुओं से α, β, γ (एल्फा, बीटा एवं गामा) तरंगे निकलती रहती है जो कि विशेष उच्च ऊर्जा के लिए होती है। यदि विशेष ऊर्जा को नियंत्रित करके उसका सकारात्मक उपयोग किया जाता है तो वे मानव का कल्याण करती है लेकिन यही ऊर्जा जब अनियंत्रित हो जाती है तो ये मानव का विनाश कर देती है। उदाहरण के लिए जब रेडियो एक्टिव तत्वों का उपयोग बिजली उत्पादन में किया जाता है तो ये विकास को उच्च गति देता

है तथा यह परमाणु संयंत्र (Atomic Reactor) कहलाता है। लेकिन यही रिएक्टर जब अनियंत्रित हो जाता है तो, महाप्रलय का कारण बनता है। जैसे पानी को इकट्ठा करके बांध, तालाब इत्यादि बनाए जाते हैं तो वे कृषि में सिंचाई के लिए सहायक है। पानी को गिराकर टरबाइन चलाकर विद्युत भी उत्पन्न की जाती है। बांध के पास अच्छे बगीचे लगाने का काम भी हो सकता है एवं ये पर्यटन के लिए भी उपयोगी हो सकता है। लेकिन अचानक ही बांध टूट जाए तो बाढ़ जैसी प्रलयंकारी घटना का भी कारण बन सकता है। ठीक वैसे ही परमाणु बिजलीघर या परमाणु संयंत्र भी विकास एवं विनाश दोनों का कारण बन सकता है।

परमाणु संयंत्र जब खराब हो तो विनाश का कारण बनता है। लेकिन अनेकों देश के वैज्ञानिकों ने परमाणु शक्ति के दुरूपयोग के खातिर परमाणु बमों का निर्माण किया हुआ है। जो अधिक विनाशकारी होता है। जैसे 1945 में अमेरिका ने जापान के हिरोशिमा एवं नागासाकी नगरों पर परमाणु बम गिराया था तो उस समय पत्थर भी वाष्प में बदल गए थे। अनेक दिनों तक तेज ऊर्जा का पुंज वहां रहा। आज भी वहां की संतानें विकलांग होती है। हिरोशिमा तथा नागासाकी में तो जीव (पादपों एवं प्राणियों) का नामोनिशान ही मिट गया था।

परमाणु संयंत्र के खराब होने या टूट जाने के कारण बहुत बड़ा विनाश होता है। जैसे फुकुसीमा 11 मार्च 2011 को सुनामी से टूटे परमाणु ऊर्जा संयंत्र में विस्फोट हुआ जिसमें 21 हजार से अधिक व्यक्ति मारे गए तथा 30 हजार लापता हो गये।

इसी प्रकार रूस के चेरनोबिल में भी परमाणु संयंत्र दुर्घटना हुई। ये घटना 26 अप्रेल 1986 में घटी जिसमें 31 व्यक्ति मारे गए। जबकि रूस का वह परमाणु बिजलीघर घने जंगल में तथा मानव बस्ती से सैकड़ों किलोमीटर दूर था। अमेरिका के थ्री माइल आइसलैण्ड के परमाणु बिजलीघर में भी 1979 में ऐसी ही घटना घटी थी जिससे भारी जान–माल का नुकसान हुआ था।

सामान्यतया 0 से 10 मिलीसीवर्ट्स तक प्रतिवर्ष सामान्य स्थान पर रहने वालों को संकट से नीचे का माप माना जाता है। यूरेनियम खदान में काम करने वालों की विकिरण ग्राह्यता क्षमता आमतौर पर 20 मिलीसीवर्ट्स होती है। परमाणु विशेषज्ञ मानते हैं कि 150 मिलीसीवर्ट्स की विकिरण कैंसर को उत्पन्न करता है। 1000 मिलीसीवर्ट्स प्रति घण्टे की विकिरण विष या ज़हर पैदा करती है एवं यह विनाश का कारण हो सकती है।

आपदा प्रबंधन (Disaster Management)

प्राकृतिक और मानवीय कृत आपदाओं से बचना तो काफी कठिन है। परन्तु फिर भी व्यक्ति कुछ सीमा तक अपने आपको सुरक्षित रख सके इसके लिए किये जाने वाले प्रयासों को आपदा प्रबंधन कहते हैं। ये अलग–अलग आपदाओं के लिए अलग–अलग होते हैं।

प्रकृति के जैविक एवं अजैविक घटकों में मानव भी एक जैविक घटक का सदस्य है। अर्थात् मानव भी प्रकृति का एक अभिन्न घटक है तथा ये प्रकृति पर निर्भर भी है तो प्रकृति के संसाधनों का सर्वाधिक दोहन करने वाला भी। प्रकृति में यदि कोई आपदा घटित होती है तो वह भी अन्य घटकों जैसे पादप, प्राणियों की तरह प्रभावित होता है तथा असहाय सा हो जाता है। फिर भी आदिकाल से ही मानव आपदाओं से अपने आपको सुरक्षित रखने के प्रयास करता आया है। जैसे बाढ़ से बचने के लिए ऊंची जगहों पर बस्ती बनाता था। सूखे एवं पानी की कमी से बचने के लिए वर्षा जल को तालाब या बावड़ी या अन्य तरीकों से इकट्ठा करता आया है। सर्दी से बचने के लिए पहनावा एवं खाने–पीने का परिवर्तन करता आया है। चक्रवातों से बचने के लिए अपने आवास स्थानों को सुरक्षित तरीके से बनाता था। आग से बचने के भी प्रयास करता था।

आधुनिक युग में आपदाओं के बचने के लिए विशेष अनुभवों तकनीकों तथा उपकरणों का उपयोग होता है। जिससे त्वरित गति से सहायता मिले सके तथा आधुनिक युग में अनेकों प्रशिक्षित आपदा प्रबंधक तैयार किये जाते हैं। जो आपदा के समय सहायता को निकल पड़ते हैं। आपदा प्रबन्धन में सरकारी व्यवस्था भी होने लगी है तथा अपना एक विशेष आपदा प्रबंधन का बजट भी सरकारें रखती हैं।

आपदा प्रबंधन में प्रभावितों की जान बचाना और उन्हें पुनः मुख्यधारा में लाना प्रमुख कार्य होता है।

आपदा प्रबंधन में सेना, चिकित्सा विभाग, पुलिस, यातायात विभाग, अनेकों आपदा प्रबंधन के लिए बनी एजेन्सियां तथा स्वयंसेवी संस्थाएं संयुक्त रूप से भागीदारी निभाती है। ये भी बाढ़ के समय अलग प्रकार से काम करते हैं, तो भूकम्प के समय अलग प्रकार से तो, आग लगने पर अलग प्रकार से अर्थात् अलग–अलग आपदा में सहायता तथा प्रबंधन अलग–अलग प्रकार से होता है। परन्तु भोजन एवं पुनर्वास सब में होता है। बाढ़ के समय प्रभावितों को बाढ़ प्रभाव क्षेत्र से शीघ्रता से निकाल कर सुरक्षित स्थानों पर ले जाया जाता है। उनको वहां आवश्यकतानुसार चिकित्सा दी जाती है तथा उनके भोजन व पुनर्वास की व्यवस्था की जाती है।

आग लगने पर अग्निशमन यंत्रों से पहले आग बुझाने का और प्रभावित व्यक्तियों को तुरंत वहां से बचा कर निकालते हैं व उनकी चिकित्सा करवाई जाती है तथा आग और आस–पास के क्षेत्रों में ना फैले इसकी भी व्यवस्था की जाती है।

भूकम्प के समय वहां से पीड़ितों को बचाकर सुरक्षित स्थान पर पहुंचाते हैं तथा मलबे को हटाकर वहां से भी ज़िन्दगियों को बचाने का प्रयास किया जाता है। पीड़ितों के पुनर्वास तथा भोजन की भी व्यवस्था होती है। यही कार्य भूस्खलन के समय होता है।

चक्रवात प्रभावितों में भी प्रभावितों को सुरक्षित स्थान पर ले जाते हैं तथा भोजन पानी की व्यवस्था एवं चिकित्सा की व्यवस्था के पश्चात् पुनर्वास कार्यक्रम होने तक आपदा प्रबंधन चलते हैं।

सूखे की आपदा में वहां पर सर्वप्रथम पीने के पानी एवं खाने की व्यवस्था कराई जाती है। चाहे वहां रेल माध्यम से अन्न एवं जल की व्यवस्था हो अथवा टैक्ट्ररों या अन्य माध्यमों से सहायता पहुंचे वहां सहायता पहुंचाई जाती है। इन स्थिति में पशुओं के लिए चारे की व्यवस्था कराई जाती है।

परमाणु विकिरण आपदा में भी सर्वप्रथम विकिरण के स्थान से प्रभावितों को दूर सुरक्षित स्थान पर ले जाते हैं तथा प्रभावितों की आवश्यक चिकित्सा एवं पुनर्वास की व्यवस्था की जाती है।

आधुनिक युग में तो आपदा में प्रभावितों की सहायता के लिए पूरे विश्व में सहायता के हाथ उठ जाते हैं। एक देश की अनेकों देश सहायता करते हैं। वे सहायता धन की भी होती है तथा साधनों की भी होती है तथा इसी के साथ प्रशिक्षित कार्यकर्ता आपदा स्थान पर शीघ्रताशीघ्र पहुंचकर कम समय में अधिक पीड़ितों की सहयोग करते हैं।

हर देश में तथा हर देश के हर क्षेत्र में अब स्कूलों से लेकर कॉलेजों तक आपदा प्रबंधन पर शिक्षा दी जाती है। भारत में भी 2003 से स्कूलों के स्तर से ही प्रारंभ हो गई है तथा अनेक स्थानों पर आपदा प्रबंधन की विशेष शिक्षा दी जाती है जो कि डिग्री तथा सर्टिफीकेट कोर्स की शिक्षा होती है।

विशेष प्रबन्धन उपाय

- भूकम्प आने पर सर्वप्रथम खुले स्थानों पर जाने का प्रयास करे अथवा कोण युक्त स्थान पर छिपे। किसी मजबूत टेबल के नीचे भी बचने के लिए बैठा जा सकता है। बिजली एवं गैस बंद करें।
- आग लगने पर शीघ्रता से गैस सिलेण्डरों और अन्य ज्वलनशील पदार्थों को स्थान से दूर ले जाए। स्वयं को भी आग से बचाने के लिए सुरक्षित स्थानों पर भागना चाहिए।
- बाढ़ के समय ऊंचे स्थानों पर जाना चाहिए तथा इस समय सामूहिक झुण्डों में रहना चाहिए। सावधानी एवं आत्मविश्वास के साथ कार्य करना चाहिए। रस्सों का भी उपयोग करके सुरक्षित स्थानों पर जाया जा सकता है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. पर्यावरण व मानव समाज दोनों एक दूसरे के पूरक हैं तथा वेदों, उपनिषदों आदिकाल से ही मानव समाज पर्यावरण की रक्षा करता रहा है।
2. कृषि एवं औद्योगिक विकास, नगरीकरण, खनन आदि कारणों से मानस समाज ने प्रगति तो की है लेकिन इससे संसाधनों का अवनयन हुआ है तथा पर्यावरण के घटकों का ह्रास हुआ है।
3. पर्यावरणीय शिक्षा द्वारा समाज को जन जागृत कर पर्यावरण की सुरक्षा एवं संरक्षण किया जा सकता है।
4. जनचेतना में संचार माध्यम, पर्यावरण क्लब, पर्यावरण विज्ञान केन्द्र, विभिन्न पर्यावरणीय प्रतियोगिताओं के आयोजन द्वारा पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा मिल सकता है।
5. पर्यावरणीय नैतिकता से तात्पर्य उन नियमों से है जो पर्यावरण व उसके घटकों का उचित व श्रेष्ठ प्रकार से प्रयोग करने की शिक्षा प्रदान करें।
6. चिपको आन्दोलन की शुरूआत राजस्थान के खेजड़ली ग्राम में अमृता देवी द्वारा खेजड़ली के वृक्षों को बचाने के लिए अपने बलिदान से हुई। इस आन्दोलन के प्रणेता श्री सुन्दरलाल बहुगुणा रहे।
7. चिपको आन्दोलन का घोष वाक्य – ''क्या है जंगल के उपकार, मिट्टी, पानी और बयार, मिट्टी, पानी और बयार, जिन्दा रहने के आधार''
8. अरण्य संस्कृति जो भारत की प्राचीन संस्कृति है, इसमें पेड़ पौधों व प्राणियों को उनके पूजा स्रोतों से जोड़कर संरक्षण करने का अभिप्राय से है।
9. वर्षा जल को झील, तालाब, बावड़ी व टांकों आदि में संग्रहित किया जाता है। आजकल सरकार ने नवनिर्मित मकानों में भी छत के पानी को टांके में एकत्रित कर संरक्षित करने का नया प्रावधान किया है।
10. भारत में बंजर भूमि के बढ़ने के अनेक कारण है जिसमें बाढ़, सूखा, भूस्खलन, वनोन्मूलन, झूमिंग कृषि आदि प्रमुख है।
11. प्रकृति में घटने वाली वे घटनाएं जो विनाश करती है वे आपदाएं कहलाती है। आपदाएं प्राकृतिक एवं मानव कृत होती है।
12. प्राकृतिक आपदाएं तो भूकम्प, भूस्खलन, अकाल, बाढ़, आग, ज्वालामुखी, चक्रवात के रूप में हो सकती हैं।
13. युद्ध एवं आण्विक (नाभिकीय) आपदाएं मानवकृत है।
14. पृथ्वी की परतें जब टकराती है तो इससे निकली ऊर्जा से

भूकम्प आते हैं।

15. भूकम्प एवं बरसात, बाढ़ आदि से भूस्खलन होते हैं। ये भी हानिकर है।
16. तेज वर्षा से बाढ़ आती है। जो विनाशकारी होती है। इससे शहर एवं गांव पूर्ण रूप से नष्ट हो सकते हैं।
17. जंगलों में लगी आग या मानव बस्ती में लगी आग भी आपदा होती है। ये सब कुछ नष्ट कर देती है।
18. पृथ्वी के आंतरिक हलचल से ज्वालामुखी फटते हैं।
19. अचानक आए चक्रवात भी एक प्राकृतिक आपदा है जो भयावह रूप धारण कर लेता है। तो अनेक बस्तियां नष्ट हो जाती है।
20. युद्ध में मानव द्वारा नाभिकीय हथियारों के उपयोग से नाभिकीय आपदा आती है। अनेक बार तो नाभिकीय रिएक्टर टूटने के कारण भी नाभिकीय आपदाएं आती हैं।
21. आपदा आने पर व्यक्ति अपने आपको जिन विधियों से सुरक्षित रख सकता है उसे आपदा प्रबंधन कहते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न (Multiple Choice Questions)

1. पर्यावरण ह्रास के प्रमुख कारण है –
   (अ) वनोन्मूलन (ब) खनन
   (स) औद्योगीकरण (द) उपरोक्त सभी
2. कृषि योग्य भूमि के अवनयन के कारण है –
   (अ) नगरीकरण (ब) औद्योगीकरण
   (स) खनन (द) उपरोक्त सभी
3. विकास की गति बढ़ने के फलस्वरूप क्या हुआ –
   (अ) पर्यावरण समृद्ध हुआ (ब) पर्यावरण सन्तुलन बढ़ा
   (स) पर्यावरण विनाश बढ़ा (द) कोई प्रभाव नहीं
4. राजस्थान में खेजड़ली आन्दोलन किसलिए हुआ –
   (अ) देश की रक्षा हेतु
   (ब) वृक्षों की रक्षा हेतु
   (स) संस्कृति की रक्षा हेतु
   (द) गांव के जल स्रोतों की रक्षा हेतु
5. चिपको आन्दोलन का नेतृत्व किसने किया –
   (अ) सुन्दरलाल बहुगुणा (ब) मेधा पाटकर
   (स) विनोबा भावे (द) बाबा आमटे
6. भारत की सबसे बड़ी मानव निर्मित झील है –
   (अ) नक्की झील (ब) राजसमंद झील
   (स) फतहसागर झील (द) जयसमंद झील
7. कृषि या वन क्षेत्र में वर्षा जल संग्रहण का छोटा स्थल कहलाता है –
   (अ) नाडी (ब) कुआ
   (स) टांका (द) बावड़ी
8. राष्ट्रीय बंजर भूमि विकास बोर्ड का गठन कब हुआ –
   (अ) 1988 (ब) 1985
   (स) 1982 (द) 1992
9. निम्न में से बंजर भूमि निर्माण में कौनसा कारण मानवीय कारण नहीं है –
   (अ) वनोन्मूलन (ब) झूमिंग कृषि
   (स) भूस्खलन (द) कचरा संग्रहण
10. लावा किसी प्राकृतिक घटना के फलस्वरूप निकलता है –
    (अ) भूस्खलन (ब) भूकम्प
    (स) ज्वालामुखी (द) बाढ़
11. समुद्र के भीतर भूकम्प के फलस्वरूप कौनसी आपदा आती है –
    (अ) बाढ़ (ब) भूस्खलन
    (स) ज्वालामुखी (द) सुनामी
12. निम्न में से कौनसा नाभिकीय दुर्घटना का उदाहरण नहीं है –
    (अ) चेरनोबिल दुर्घटना (ब) थ्री माइल दुर्घटना
    (स) भोपाल त्रासदी (द) उपरोक्त सभी
13. कौनसी आपदा मानव प्रजाति के लिए सबसे घातक होती है –
    (अ) अकाल (ब) बाढ़
    (स) भूस्खलन (द) नाभिकीय आपदा
14. भूकम्प तूफान क्या होते हैं –
    (अ) भूकम्प के बाद के झटके
    (ब) भूकम्प से गिरी मिनारें
    (स) भूकम्पों की एक श्रृंखला
    (द) भूकम्प पूर्व का वातावरण
15. किसानों के लिए अकाल के बाद कौनसी प्राकृतिक आपदा अधिक चिंता का विषय रहती है –
    (अ) बाढ़ (ब) भूस्खलन
    (स) ज्वालामुखी (द) चक्रवात

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न (Very Short Answered Questions)

1. वनोन्मूलन से क्या तात्पर्य है?

2. स्मृति वन क्या होते हैं?
3. नगरीकरण क्या होता है?
4. उत्तराखण्ड में चमोली आन्दोलन का नेतृत्व किसने किया?
5. भूकम्प की तीव्रता किससे नापते हैं?
6. संसार का सबसे पुराना ज्वालामुखी कौनसा है?
7. चेरनोबिल दुर्घटना किस आपदा का उदाहरण है?
8. बंजर भूमि किसे कहते हैं?
9. पर्यावरणीय नैतिकता किसे कहते हैं?
10. भारत के संविधान में पर्यावरण सुरक्षा के क्या प्रावधान है?
11. अरण्य संस्कृति से क्या अर्थ है?
12. चक्रवात क्यों आते हैं?
13. वर्षा जल पुनर्भरण क्या है?
14. झूमिंग कृषि क्या है?
15. सूखा संभावित क्षेत्र कार्यक्रम का क्या उद्देश्य था?

लघूत्तरात्मक प्रश्न (Short Answered Questions)

1. खेजड़ली बलिदान पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
2. भूकम्परूपी आपदा पर अपने विचार रखिए।
3. बाढ़ क्यों आती है?इसके कारणों की व्याख्या कीजिए।
4. बंजर भूमि सुधार के क्या तरीके हैं?
5. वर्षा जल संरक्षण के क्या–क्या माध्यम है?
6. चक्रवात क्यों आते हैं?इसके प्रभावों पर प्रकाश डालिए।
7. नाभिकीय दुर्घटनाओं पर टिप्पणी लिखिए।
8. आपदा प्रबन्धन किसे कहते हैं?
9. सुनामी क्या है?इससे बचने के लिए किये जाने वाले उपायों की विवेचना कीजिए।
10. आग लगने के क्या–क्या कारण है?इससे किस–किस प्रकार की हानि हो सकती है। लिखिए।
11. बाढ़ आने के क्या परिणाम होते हैं?ऐसे समय में क्या करना चाहिए?
12. भूस्खलन के क्या कारण हैं?इसके प्रकारों की व्याख्या कीजिए।
13. स्मृति वन व अरण्य संस्कृति पर टिप्पणी कीजिए।
14. बंजर भूमि सुधार पर सरकार द्वारा किये गये कार्यक्रमों की व्याख्या कीजिए।
15. पर्यावरणीय जन चेतना किस प्रकार जागृत की जाती है? लिखिए।

निबन्धात्मक प्रश्न (Long Answered Questions)

1. पर्यावरण एवं संसाधनों के ह्रास के विभिन्न कारणों पर लेख लिखिए।
2. चिपको आन्दोलन क्या है?
3. निम्न में से किन्हीं दो आपदाओं व उनके प्रबन्धन पर टिप्पणी लिखिए –

   (अ) बाढ़ (ब) भूस्खलन (स) सुनामी
4. वर्षा जल पुनर्भरण के विभिन्न प्रचलित तरीकों एवं आधुनिक टांका पद्धति को विस्तार से समझाइए।
5. बंजर भूमि होने के प्राकृतिक व मानवीय कारणों पर विस्तृत लेख लिखिए।

उत्तरमालाः 1 (द) 2 (द) 3 (स) 4 (ब) 5 (अ) 6 (द) 7 (अ) 8 (ब) 9 (स) 10 (स) 11 (द) 12 (स) 13 (द) 14 (स) 15 (अ)